भारतीय विधान-परिषद

बृहस्पतिवार, ता. 18 नवम्बर, सन् 1948 ई.

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक उपाध्यक्ष (डा. एच.सी. मुकर्जी) की अध्यक्षता में कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः 10 बजे आरंभ हुई।

प्रतिज्ञा-ग्रहण तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर करना

निम्न सदस्यों ने प्रतिज्ञा ग्रहण की और रजिस्टर पर हस्ताक्षर किये:

1. डा. जीवराज मेहता (बड़ौदा)
2. श्री चिम्मनलाल चक्कूभाई शाह (सौराष्ट्र)

विधान का मसौदा–(*जारी*)

अनुच्छेद 3–(*जारी*)

***श्री लोकनाथ मिश्र** (उड़ीसा : जनरल): श्रीमान्, इसके पूर्व कि हम वाद-विवाद आरम्भ करें, मैं अत्यन्त महत्त्वपूर्ण औचित्य प्रश्न उपस्थित करना चाहता हूं। वह इस सभा के सदस्यों के अधिकारों और सुविधाओं के संबंध में है। आपके प्रति पूर्ण-श्रद्धा रखते हुए क्या मैं यह निवेदन कर सकता हूं कि कल संशोधन पेश करने के लिए आपकी आज्ञा न मिलने पर मैंने यह महसूस किया कि मुझे उस संशोधन के पेश करने के उस अधिकार से वंचित किया गया, जो सदस्य के नाते मुझे सदैव प्राप्त है। मैंने नियमों को देखा और मुझे यह प्रतीत हुआ कि ऐसा कोई प्रावधान नहीं है, जो मुझे संशोधन पेश करने के अधिकार से वंचित करे। आपने इस आधार पर संशोधन पेश न करने दिया कि मेरा संशोधन प्रो. के.टी. शाह द्वारा पेश किये गये संशोधन के अनुरूप था। मैं नहीं जान सका कि ये दोनों संशोधन किस प्रकार अनुरूप माने जा सकते हैं। प्रोफेसर शाह का संशोधन अर्थ संबंधी है और मेरा संशोधन राजनीति संबंधी। वे दस वर्ष आगे की

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[श्री लोकनाथ मिश्र]

सोचते हैं और मेरा प्रस्ताव इसी समय लागू करने योग्य है, पूर्णतया वैध है और अभी प्रवर्त्तनीय है। वे ''रियासतों'' को छिन्न-भिन्न करना चाहते हैं, मैं रियासतों को रहने देना चाहता हूं और उनकी पूर्ण व्याख्या करना चाहता हूं। मेरा प्रस्ताव जनता की उस सर्वोच्चता पर आश्रित है, जो उनमें निहित है, वह कोई शर्त नहीं लगाता है और फिर ये दो संशोधन परस्पर इतने भिन्न हैं कि...

***उपाध्यक्षः** (डा. एच.सी. मुकर्जी): क्या इन समस्त तर्कों की आवश्यकता है?

***श्री लोकनाथ मिश्रः** मेरे संशोधन की संख्या 85 है और प्रो. शाह के संशोधन की संख्या 126 है।

***उपाध्यक्षः** यह औचित्य प्रश्न उठाया जा चुका है और इस पर निर्णय भी दिया जा चुका है। यह दुर्भाग्य की बात है कि अपने पद के कारण मुझे कुछ निर्णय करने पड़ते हैं। इस संबंध में निर्णय दिया जा चुका है और उस पर फिर विचार करने के लिये मैं उद्यत नहीं हूं।

***श्री लोकनाथ मिश्रः** प्रश्न यह है कि ऐसी दशा का क्या इलाज है?

***माननीय सदस्यगणः** शान्ति, शान्ति।

***उपाध्यक्षः** कृपया अपना स्थान ग्रहण कीजिये और मुझे आभारी कीजिये।

चौ. रणवीर सिंह (पूर्वी पंजाब : जनरल): सभापति महोदय, कल मैं यह बता रहा था कि इस संशोधन के अनुसार धार्मिक या किसी जात-पात की माइनोरिटी जिसकी किसी स्टेट या किसी इलाके में मैजोरिटी नहीं है, तो भी उसके लिये, इसमें कोई शक नहीं कि इस संशोधन से गुंजायश पैदा हो जाती है कि प्रेसीडेंट या भारत सरकार चाहे तो उनको उनकी मर्जी की स्टेट के अंदर हदबंदी की तब्दीली की जा सकती है। लेकिन मुझे डर है कि इस संशोधन के अनुसार वह, ऐसे इलाकों के लिये जो किसी स्टेट के इलाकों में मैजोरिटी में हों, लेकिन स्टेट के अंदर माइनोरिटी में हो, उनकी कामयाबी के चान्सेज जो हैं, वह कम कर देती है और उनकी मांग का वजन तथा उनकी आवाज का वजन भी कम हो

जाने का डर है क्योंकि इस संशोधन के अनुसार वह मसला स्टेट के लेजिस्लेचर की बहस के अंदर आयेगा, क्योंकि वह इलाका स्टेट के अंदर एक माइनोरिटी है, चाहे वह स्टेट के किसी इलाके में मैजोरिटी में भी है। कुदरती तौर पर इसका नतीजा यह होगा कि यह लिख दिया जायेगा कि चन्द लेजिस्लेचर के मेम्बर स्टेट की बाउण्ड्री की तब्दीली चाहते हैं। तो इससे जिस तरह से पहले संशोधन के अनुसार यह था कि किसी इलाके की मैजोरिटी मेम्बरों की यह चाहें कि वह इलाका किसी दूसरी स्टेट या एक नई रियासत के साथ जोड़ दिया जाये, तो उसके ऊपर विचार हो सकता था। अब जो नया संशोधन है, उससे मुझे डर है कि उनकी आवाज के असर में फर्क पड़ जायेगा और खास तौर पर ऐसे इलाकों की, जिनके पास न कोई नेता है, न जिनके पास कोई अपना प्रेस है और न कोई दूसरा रास्ता आवाज उठाने का जरिया (साधन) है, उनके लिये खास तौर पर यह मुश्किल पैदा होगी। यू.पी. को ही ले लीजिए। जिस समय हम पिछली दफा विधान के बारे में विचार कर रहे थे, हमारी पार्टी के अन्दर कई दफा इस मसले पर विचार होते हुये यह बात साफ हुई कि यू.पी. वाले यह महसूस करते हैं कि उनका सूबा बहुत बड़ा सूबा है। मिसाल के तौर पर उस समय यू.पी. वालों ने कहा था कि दूसरे सूबों की तरह एक लाख के ऊपर एक मेम्बर की नुमायन्दगी आयेगी। तो यू.पी. का हाउस 600 का बन जायेगा और वह बहुत बड़ा हाउस होगा। इस किस्म की legal और administrative difficulties को मानते हुए भी यह कहा जाता है कि कोई भी इलाका दिल्ली को या हरियाना प्रान्त को न दिया जाये। हालांकि इस इलाके के लोग यह चाहते हैं कि वह दिल्ली या हरियाना प्रान्त के अन्दर मिला दिया जाये। लेकिन हुआ क्या? चूंकि उनके पास अपना कोई नेता नहीं था, न अपना प्रेस था। पहले तो यू.पी. में, जिन्होंने इस किस्म की आवाज उठाई थी, उनकी वफादारी के ऊपर शक किया गया और उनकी आवाज को इतनी बुरी तरह से दबाया गया कि जिसका कोई अन्दाज नहीं। प्राविंशियल कांग्रेस कमेटी ने उनको बैन कर दिया और कहा कि वह कोई आवाज सूबे की तब्दीली के लिए नहीं उठा सकते।

अतः मुझे डर है कि यह जो संशोधन है, इससे उन आदमियों के लिये जिनकी सभ्यता एक है, बोली एक है, ढंग एक है, जिनका legal और administrative दूसरे नुक्ते निगाह से इकट्ठा होना देश के लिये फायदेमन्द है, वह कुछ न कर सकेंगे। मेरी राय में जैसा कल ठाकुरदास ने बतलाया था, हरियाणा प्रान्त के बारे में जब आवाज को उठाया गया, तो उससे कुछ आदमियों की वफादारी पर शक

[चौ. रणवीर सिंह]

किया गया और कहा गया कि यह जाट सूबा बनाना चाहते हैं। लेकिन सच यह है कि अगर हरियाना प्रान्त बनता, जैसे अंग्रेजों के समय में भी जिस समय राउन्ड टेबुल कान्फ्रेंस का समय था, उस समय कारवेट स्कीम के मुताबिक एक नया सूबा बनाने की स्कीम थी। उस समय भी इस प्रान्त का कोई बड़ा नेता न था। इसलिये उस स्कीम को टारपीडो कर दिया गया। तो आज भी यही कह दिया जाता है कि यह लोग जाट सूबा अलग बनाना चाहते हैं। लेकिन जैसा अभी मैं बताना चाहता था, सच यह है कि जाट इसके अंदर एक माइनोरिटी हैं और उनकी अकेली community के नाते भी और कोमों के मुकाबले में मैजोरिटी नहीं होती है। अगर कोई ज्यादा गिनती वाली community हैं तो वह हरिजन भाइयों के अंदर चमार community है, तो अगर कोई स्थान या सूबा बनता है, तो वह चमारों का सूबा बनता है। परन्तु चूंकि उनके पास अपना प्रेस नहीं है, इसलिये उनकी आवाज को उठने नहीं दिया जाता।

इसमें कोई शक नहीं कि मैं संशोधन का समर्थन करता हूं, पर इसके साथ-साथ मैं यह चाहता हूं कि इसके अंदर कोई इस किस्म की तब्दीली जरूर कर दी जाये, जिससे जब केन्द्र प्रान्तीय धारा सभा से उसकी राय पूछे, तो उसके अन्दर यह भी दर्ज हो कि उस इलाके की, जो इलाका पृथक होकर दूसरे के साथ मिलना चाहता है, उसके representation की majorty की राय क्या है? उसकी राय केंद्रीय असेम्बली में दर्ज होकर आये और पता लगे कि इलाका क्या चाहता है।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): श्रीमान् उपाध्यक्ष महोदय, जिस प्रभुता के सिद्धान्त का मेरे माननीय मित्र डा. अम्बेडकर ने कल प्रतिपादन किया था, मैं आशा करता हूं कि उस सिद्धान्त से पूर्वकालीन भारतीय रियासतें अनुचित लाभ न उठायेंगी। मैं कह नहीं सकता कि क्या उनका आशय यह था कि ये बड़े राज्य के अन्दर छोटे राज्य के समान हैं? मैं समझता हूं कि आधुनिक समय में ऐसे सिद्धान्त का प्रतिपादन करना संकटापन्न है। यदि हम प्रथम अनुसूची के भाग 3 को लें, तो हम देखेंगे कि इस भाग के दो विभाग हैं–विभाग 'अ' और विभाग 'ब'। इनमें से अनेकों रियासतें सन्निकट भारतीय प्रान्तों में मिल चुकी है। कुछ रियासतों ने आपस में मिलकर बड़े-बड़े संघ बना लिये हैं और कुछ रियासतें अभी तक अपना अलग अस्तित्व बनाये हुए हैं। मेरे माननीय मित्र

डा. अम्बेडकर द्वारा पेश किये संशोधन के उपखंड (ब) में यह लिखित हैं कि जहां इस प्रकार का प्रस्ताव प्रथम अनुसूची के भाग 3 में उस समय उल्लिखित रियासत या रियासतों की सीमा या उनके नामों पर प्रभाव डालता हो...इसका आशय यह हुआ कि प्रथम अनुसूची के तीसरे भाग में दी हुई समस्त रियासतों का उल्लेख इसमें आ जाता है, चाहे फिर वे पृथक रियासतें हो, चाहें संयुक्त रियासतों के संघ हो या चाहे वे प्रान्तों में विलीन रियासतें हों। मैं सोचता हूं कि क्या उन छोटी-छोटी रियासतों के लिये भी, जो प्रान्तों में विलीन हो गई हैं, प्रभुता का यह सिद्धान्त लागू होगा और क्या इन रियासतों के मिलाने के लिये भी प्रत्येक रियासत की सहमति ली जायेगी? इसके अतिरिक्त इस बारे में यह भी बात विचार किये जाने लायक है कि क्या इन रियासतों को प्रभुता सम्पन्न रियासत माना जाये? यदि डा. अम्बेडकर यह कहें कि भारतीय संघ में सम्मिलित होने के लिये लिखे गये प्रवेश-विलेख के अभिसमयों के अनुसार इस बारे में राज्यों की सहमति प्राप्त करनी होगी, तो इस बात को मैं कुछ सीमा तक ठीक मान सकता हूं। परन्तु श्रीमान्, मेरा विश्वास है कि आगामी दो या तीन माह के पश्चात्, जब कि हम इस विधान को स्वीकार कर चुके होंगे, तब वह आशा जो डा. अम्बेडकर ने विधान के मसौदे पर विचार करने वाले प्रस्ताव संबंधी भाषण में प्रकट की है, अर्थात सब प्रकार से उस समय तक रियासतें प्रान्तों के समान हो जायेंगी—पूरी हो जायेंगी और इसमें संदेह नहीं कि इस संबंध में सरदार पटेल के कठिन प्रयास सफल होंगे और जब तक हम इस विधान को स्वीकार कर पायेंगे, उस समय तक रियासतों और प्रान्तों में कोई अन्तर न रह गया होगा। इन विचारों को दृष्टि में रखते हुए मेरे माननीय मित्र पंडित कुंजरू के संशोधन में बहुत कुछ तथ्य है। यदि विधान के स्वीकार होने तक प्रांतों और रियासतों की राजनैतिक व्यवस्था एक सी नहीं हो जाती, तब यह बात सोची जायेगी कि क्या ऐसे कोई कारण हैं, जिनके लिये रियासतों की तथाकथित प्रभुता को हम विशेष महत्त्व दें; साथ ही यह कह देना भी ठीक होगा कि इस विषय में राजाओं की प्रभुता उनकी केवल नाम के लिये ही प्राप्त है। अत: मैं पंडित कुंजरू के इस तर्क से सहमत हूं कि यदि रियासतों में प्रान्तों की सी राजनैतिक व्यवस्था भी हो जाती है, तब भी हमें रियासतों के राजाओं या उनके विधान-मण्डलों के विचार जान लेने के अतिरिक्त उनसे और कुछ न पूछना चाहिये। यह स्पष्ट है कि जब हम रियासतों के राजाओं के या राजप्रमुखों के या रियासतों के विधान-मंडलों के विचार जान लेंगे और यदि उनके विचार ऐसे प्रस्ताव के विरुद्ध हों, तो वह प्रस्ताव पेश नहीं किया जायेगा। इसी प्रकार

[श्री एच.वी. कामत]

यदि प्रान्तों से परामर्श किया जाता है और यदि उनके विचार भी ऐसे प्रस्ताव के विरुद्ध हों, तो वह प्रस्ताव संघ की पार्लियामेंट में नही रखा जायेगा। अत: मैं नहीं समझता हूं कि इस प्रकार का अन्तर किस लिये रखा जाये। यदि आप किसी अधिकारी अथवा किसी सरकार से परामर्श लेते हैं, तो इसका आशय यह है कि यदि वह सरकार उस प्रस्ताव के विरुद्ध है, तो वह प्रस्ताव संघीय पार्लियामेंट में नहीं रखा जायेगा। सरदार पटेल विगत इतने महीनों से हमें यह कहते चले आ रहे हैं कि हम प्रान्तों और रियासतों के मध्य सब अंतरों को मिटा देंगे और प्रान्त रियासतों के अनुरूप बना दिये जायेंगे। इसलिये यह वान्छनीय है कि यदि आप प्रान्तों से परामर्श करते हैं, तो रियासतों से भी परामर्श करें और यदि आप रियासतों की सम्मति लें तो प्रान्तों की भी सम्मति लें।

अन्त में मैं डा. अम्बेडकर से प्रार्थना करूंगा कि वे परिषद में अपने प्रथम भाषण में प्रकट की गई आशा को, अर्थात् उस आशा को जो उन्होंने यह कह कर व्यक्त की थी कि यथासंभव अत्यन्त शीघ्र ही प्रान्तों के अनुरूप बना दिया जायेगा और ध्यान में रखकर और विधान के उन अनुच्छेदों को विचार में रखकर, जिनकी ओर पंडित कुंजरू ने कल संकेत किया था और जो कि इस प्रकार के अंतर को मिटाने के संबंध में है मैं उनसे प्रार्थना करूंगा कि वे यह भी विचार करें कि इस प्रकार के गुप्त विभेद भी मिटाना आवश्यक है या नहीं। श्रीमान्, मुझे आशा है कि हम शीघ्र ही भगवान की कृपा से प्रभुता के इस सिद्धान्त का शीघ्र ही अन्त कर देंगे, जिसे कि रियासतों के लिये इस बारे में प्रतिपादित किया गया है।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): श्रीमान् उपाध्यक्ष, अनेकों सदस्यों ने यह कहा है कि यह संशोधन सदस्यों को इस संशोधन में ही हुई बातों पर प्रभाव डालने वाले किसी विधेयक को पेश करने के अधिकार से वंचित करता है। इस संबंध में कुछ सदस्यों ने ऐसे तर्क उपस्थित किये हैं जो मुझे आश्चर्यजनक लगते हैं। श्रीमान्, विधान मंडल में सदस्यों के विधेयकों अथवा प्रस्तावों को पेश करने के अधिकार तथा अन्य सुविधाओं की रक्षा करने में मैं किसी से पीछे नहीं रहता। यद्यपि डा. अम्बेडकर के संशोधन में यह उल्लिखित है कि प्रधान की सहमति ली जानी चाहिये, तथापि उसका अर्थ यह नहीं हो सकता कि उससे सदस्यों का कोई अधिकार छिन गया। उदाहरणार्थ मैं यह बात आपके

सामने रखता हूं कि सड़कों पर चलने का प्रत्येक व्यक्ति को अधिकार है, कोई भी व्यक्ति जिस प्रकार वह चाहे चल सकता है। परन्तु जब वह सड़क पर चलता है तब उसे कुछ प्रारम्भिक नियमों का पालन करना होता है, जिससे कि वह सड़क में कोई रुकावट पैदा न करे या किसी से टकरा न जाये अथवा किसी की मृत्यु का कारण न बने। यदि कोई व्यक्ति मोटर या गाड़ी चलाता है तो उसे लाइसेंस लेना पड़ता है। उसे कुछ प्रारम्भिक नियमों का पालन करना होता है और यदि उन नियमों का पालन न किया जाये तो बड़ा गोल-माल हो जाये। अतः यह कहना कि डा. अम्बेडकर के इस प्रस्ताव द्वारा सदस्य अपने अधिकारों से वंचित किए जा रहे हैं, ठीक नहीं है। इसके विपरीत यह कहीं नहीं कहा गया है कि कोई भी सदस्य विधेयक पेश नहीं कर सकता है। यह बड़ा महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव है और इसीलिये यह उल्लिखित है कि अध्यक्ष से परामर्श किया जाये और उनकी सिफारिश मानी जाये। सच तो यह है कि इस से लाभ उन सदस्यों को ही होगा, जो प्रधान, अर्थात् व्यावहारिक दृष्टि से भारत सरकार से, इस बारे में सम्मति लेंगे। ऐसी सम्मति प्राप्त कर लेने से उन्हें इस प्रकार का प्रस्ताव रखने में बड़ा बल प्राप्त हो जायेगा।

कल मेरे माननीय मित्र श्री भार्गव ने यह तर्क उपस्थित किया था कि कुछ छोटे प्रान्तों को जो बड़े प्रान्तों से पृथक् होना चाहते हैं, इस संशोधन के अंतर्गत पृथक होने का अधिकार नहीं रहेगा। मैंने कल कहा था और आज फिर कहता हूं कि यदि बहुसंख्यक किसी प्रदेश का विभाजन नहीं चाहते हैं तो अल्पसंख्यकों का बहुसंख्यकों के इस अधिकार में हस्तक्षेप करना अनुचित होगा। यदि आप बहुसंख्यकों पर अल्पसंख्यकों का शासन चाहते हैं तो वह शासन-व्यवस्था एक प्रकार की तानाशाही व्यवस्था होगी। प्रजातंत्र का अर्थ है बहुसंख्यकों का राज्य। अतः मेरा विचार है कि जो संशोधन पेश किया गया है, वह कल्याणकारी है। वह किसी सदस्य को अधिकार से वंचित नहीं करता है। इस बात के विरुद्ध मैं यह कह सकता हूं कि जब प्रधान इस बारे में अपनी सम्मति दे देगा तो इस विषय को उस सम्मति से और भी बल मिल जायेगा।

श्रीमान्, पंडित कुंजरू के संशोधन के बारे में मैं केवल एक बात पर प्रकाश डालूंगा। मेरी समझ में यह बिल्कुल नहीं आता कि प्रथम अनुसूची के प्रथम भाग के राज्यों अर्थात प्रान्तों और प्रथम अनुसूची के भाग 3 की रियासतों में क्यों अंतर रखा गया है? एक के लिये यह कहा गया है कि विधान-मंडल की राय लेनी

[श्री आर.के. सिधवा]

चाहिये और दूसरों के लिये अर्थात रियासतों के लिए उन्होंने यह कहा कि पूर्व अनुमति प्राप्त कर लेनी चाहिये। राय का अर्थ ''विचार'' से है और अनुमति का अर्थ ''सहमति तथा विषय के निर्णय'' से है। श्रीमान्, आपको यह विदित है कि इस विधान को विभिन्न प्रान्तों में भेजा गया था और उन प्रान्तों ने अपने-अपने विधान मंडलों में इस पर वाद-विवाद किया था और अपने-अपने विचार इस सभा को भेजे थे और हमको वे प्रतियां दी गई थी। यह विधि ठीक है। किसी विधान मंडल ने कोई निर्णय नहीं किया। बिहार, बंगाल तथा बम्बई के सभी विधान-मंडलों ने इस विषय पर वाद-विवाद किया और कार्यवाइयों की छपी प्रतियां हमको दी गई हैं। अनुमति का अर्थ रियासत की अनुमति से है। मैं उन लोगों के साथ सहमत नहीं हूं जो यह कहते हैं कि अनुमति का अर्थ है, राजा की अनुमति। अनुमति का अर्थ है, राज्य के विधान मंडल की अनुमति। राज्य का अर्थ राजा नहीं है। जिस प्रकार कि अध्यक्ष का अर्थ स्वयं उसके व्यक्तित्व से नहीं है; वरन् भारतीय सरकार से है। उसी प्रकार यदि राजा अनुमति देता है तो उसे रियासत के विधान मंडल से अनुमति प्राप्त करनी होगी। मैं यह जानना चाहता हूं कि रियासतों के संबंध में यह क्यों कहा गया है कि अनुमति प्राप्त करनी चाहिये और मैं यह चाहता हूं कि डा. अम्बेडकर सभा को यह बतावें कि रियासतों के संबंध में भी यह अत्यन्त आवश्यक है कि अनुमति की अपेक्षा उनकी राय ही ली जाये। अत: मेरा विचार है कि जब तक कोई मान्य कारण ऐसा करने के लिये न हो—मान्य कारण यह हो सकता है कि चूंकि भारतीय संघ में राज्य समझौते के आधार पर सम्मिलित हुये हैं, अत: उनके राजाओं से इस बारे में संपृच्छा करना आवश्यक है—तब तक न तो सारे भेद दूर करने में कोई रुकावट ही हो सकती है और न किसी प्रकार के समझौते का सवाल ही पैदा हो सका है। रियासतों की जनता के अधिकार प्रान्तों की जनता के अधिकार के समान हैं। रियासतों की जनता में इतना उत्साह है कि वे लोग सीधे ही संघ में सम्मिलित होना चाहते हैं अथवा प्रान्तों में मिलना चाहते हैं, जैसा कि हमें बताया गया है कि बिना सहमति या समझौते के उनको मिला लेना वांछनीय नहीं है। हम इस बात को स्वीकार करते हैं। पर हम यह आशा करते हैं कि उनकी राय जानने के प्रश्न में वही पद्धति बरती जायेगी जो प्रान्तों के लिये है।

इन विचारों के साथ मैं इस संशोधन का पूरे बल से समर्थन करता हूं और मैं आशा करता हूं कि डा. अम्बेडकर इस बात को स्पष्ट करेंगे कि रियासतों के लिये यह अंतर क्यों रखा गया है और क्यों उन्होंने यह कहा कि प्रान्तों के संबंध में विधान-मंडल के विचार प्राप्त किये जायेंगे और रियासतों के संबंध में उनकी पूर्व सहमति प्राप्त की जायेगी।

***उपाध्यक्षः** डा. अम्बेडकर।

***एक माननीय सदस्यः** श्रीमान्, अब वाद-विवाद समाप्त किया जाये।

***मौलाना हसरत मोहानी** (संयुक्त प्रान्त : मुस्लिम): श्रीमान्, मैं एक औचित्य प्रश्न उपस्थित करना चाहता हूं। डा. अम्बेडकर ने केवल एक संशोधन पेश किया है, इस कारण मैं निवेदन करता हूं कि उनको उत्तर देने का कोई अधिकार नहीं है। मेरे पास सभा का एक आदेश है जिसमें यह साफ कहा गया है...

***श्री आर.के. सिधवाः** मैं समझता हूं कि समस्त अनुच्छेद विचाराधीन हैं। यदि अनुच्छेद विचाराधीन हैं तो डा. अम्बेडकर को उत्तर देने का अधिकार है।

***मौलाना हसरत मोहानीः** डा. अम्बेडकर भाषण दे चुके हैं, उनको और कोई भाषण देने का अधिकार नहीं है।

***उपाध्यक्षः** कृपया अध्यक्ष को सम्बोधन करिये।

***मौलाना हसरत मोहानीः** श्रीमान्, मैं यह बताना चाहता हूं कि व्यवस्था में यह दिया हुआ है, मैं इस सभा की छपी हुई कार्यवाईयों में पढ़ रहा हूं कि संशोधन पेश करने वाले को उत्तर देने का अधिकार नहीं है। वह दूसरा भाषण नहीं दे सकता।

***उपाध्यक्षः** मेरा निर्णय है कि अनुच्छेद तथा संशोधन दोनों ही विचाराधीन हैं। डा. अम्बेडकर।

***माननीय श्री घनश्याम सिंह गुप्त** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): श्रीमान्, संशोधन पेश करने वाले को उत्तर देने का अधिकार होता है।

***उपाध्यक्षः** इससे मेरी स्थिति और भी अधिक बलवान हो जाती है।

***माननीय श्री घनश्याम सिंह गुप्तः** श्रीमान्, मेरे कहने का तात्पर्य यह है। नियम दो प्रकार के हैं। एक विधान-मंडल की कार्यपद्धति के नियम और दूसरे हमारे विधान संबंधी कार्यपद्धति के नियम। विधान मंडल के नियमों में यह दिया हुआ है कि संशोधन पेश करने वाले को उत्तर देने का अधिकार नहीं है। विधान की कार्यपद्धति के संबंध में उस नियम को जानकर के छोड़ दिया गया है। इस कारण मैं निवेदन करता हूं कि प्रत्येक संशोधन पेश करने वाले को उत्तर देने का अधिकार है।

***उपाध्यक्षः** आप डा. अम्बेडकर के उत्तर देने का विरोध तो नहीं करते हैं?

***माननीय श्री घनश्याम सिंह गुप्तः** केवल समर्थन ही नहीं करता हूं बल्कि मैं इस प्रणाली का स्थापन करना चाहता हूं कि संशोधन पेश करने वाले को उत्तर देने का अधिकार है, क्योंकि विधान-मंडल के लिए निर्मित नियमों और हमारे नियमों में बहुत अंतर है।

***उपाध्यक्षः** इस प्रश्न को डा. अम्बेडकर के उत्तर देने के पश्चात् तय करेंगे।

***श्री लक्ष्मीनारायण साहू** (उड़ीसा : जनरल): श्रीमान्, मेरे नाम से एक संशोधन है।

***उपाध्यक्षः** श्री साहू कृपा कर अपना स्थान ग्रहण करिये।

डा. अम्बेडकर।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई : जनरल): जो संशोधन डा. कुंजरू ने पेश किया है वह ऐसा संशोधन है जिससे मुझे बहुत कुछ सहानुभूति है, परन्तु दुर्भाग्यवश हम जिन परिस्थितियों में हैं उन परिस्थितियों में मैं उसे मानने के लिये तैयार नहीं हूं। अपने संशोधन को पेश करते हुए मेरे मित्र ने जो तर्क उपस्थित

किया है वह यह है कि अपना संशोधन पेश करते हुए मैंने जो विचार प्रकट किये थे वे विधान में दिये हुए अन्य वाक्य-खंडों तथा अनुच्छेदों से असंगत हैं। उनका कहना है कि प्रान्तों और राज्यों के बारे में जो विभेद अनुच्छेद 3 में समाविष्ट प्रावधानों में रखा गया है, उसको ठीक सिद्ध करने के लिये जो दलील मैंने सभा के सामने रखी थी, वह अनुच्छेद 226, 230 और 294 से असंगत है। मेरा निवेदन यह है कि उस तर्क में, जो मैंने प्रान्तों और रियासतों में अंतर रखने के समर्थन में उपस्थित किया था और उन अनेकों अनुच्छेदों में जिनका उन्होंने उल्लेख किया है, कोई विरोध नहीं है।

अनुच्छेद 226 के सम्बन्ध में जो प्रान्तीय सूची के अन्तर्गत विषयों पर केन्द्रीय विधान मंडल को कानून-निर्माण का अधिकार देता है, मेरा यह निवेदन है कि पार्लियामेंट द्वारा इस अधिकार का प्रयोग उत्तरागार के दो-तिहाई बहुमत द्वारा स्वीकृत प्रस्ताव के आधार पर ही किया जायेगा। वे यह स्वीकार करेंगे कि उत्तरागार या राज्य-परिषद में रियासतों के भी उतने प्रतिनिधि होंगे जितने कि प्रान्तों के। वे उस विशेष प्रस्ताव पर विचार करने में अवश्य भाग लेंगे जिसके द्वारा प्रस्ताव में उल्लिखित विषयों पर कानून निर्माण करने का अधिकार पार्लियामेंट को प्रदान किया जायेगा। अतः यह कहना कि 226 धारा स्वतः ही भारतीय रियासतों की प्रभुता का हरण करती है कभी उचित नहीं हो सकता। सच तो यह है कि यह तो ऐसी व्यवस्था है जो उत्तरागार के जिसमें कि राज्यों का पूरा प्रतिनिधान है, विशेष संकल्प द्वारा प्रभुता प्रदान करती है। अतः असंगति के सिद्ध करने के लिये यह उदाहरण कुछ महत्त्व नहीं रखता।

230 अनुच्छेद के सम्बन्ध में भी मेरा यह निवेदन है। इस विधान के स्वीकृत होने के बाद चाहे रियासतें कुछ भी क्यों न करें, इस समय तो यही बात है। जैसा कि मेरे विद्वान मित्र को भी ज्ञात है कि रियासतें संघ में केवल तीन विषयों के लिये ही सम्मिलित हुई हैं और उनमें से एक विषय विदेशी मामला है। अतः यह बात तो प्रत्यक्ष है कि संधि को पूरा करने का काम उस शक्ति के प्रयोग के अतिरिक्त और कुछ नहीं है जो शक्ति कि केन्द्रीय विधान-मण्डल को संधि पूरा करने के लिये दी गई है और जिसका पूरा करना 'विदेशी मामलों' का केवल

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

एक अंग है। अत: यह नहीं कहा जा सकता कि इससे उनकी प्रभुता का अपहरण होता है।

अनुच्छेद 264, जो अल्पसंख्यकों की रक्षा से सम्बद्ध प्रावधानों को भारतीय रियासतों में लागू करने के सम्बन्ध में है, इस समय नि:सन्देह उनके प्रभुता-जन्य अधिकार का हरण करता हुआ-सा प्रतीत होता है। परन्तु वास्तविकता इस से सर्वथा भिन्न है। यह केवल उन प्रस्तावों में से एक है जिनको हम भारतीय रियासतों के समक्ष रखेंगे, जब कि वे भारतीय संघ में सम्मिलित होंगे उनको खण्ड 264 स्वीकार करना होगा। मैं यह भी बता दूं कि मसौदा-समिति ने इन प्रावधानों के क्षेत्र को विस्तृत करना क्यों उचित समझा। उसे यह बात सुनाई दी कि कुछ भारतीय रियासतों की परिषदें इस बारे में बहुत प्रकार के और डर पैदा करने वाले प्रावधान बना रही हैं। अत: उसने यह उचित समझा कि वह यह पूर्णतया साफ कर दे कि किस प्रकार के अल्पसंख्यक रक्षण-सम्बन्धी प्रबंध को संघ सरकार स्वीकार्य करार देगी और किस प्रकार के रक्षण को अस्वीकार्य समझेगी।

श्रीमान्, भारतीय रियासतें और ब्रिटिश भारत के प्रान्तों में अन्तर रखने के प्रश्न पर बहुत कुछ कहा जा चुका है और मैंने यह भली प्रकार समझ लिया है कि विधान में इस अन्तर के रखने पर सभा बहुत ही उत्तेजित है, पर मैं सभा को दो बातें बताना चाहता हूं। पहली यह है कि हम अभी दोनों निगोशियेटिंग कमेटियों द्वारा किये गये संविदा की शर्तों में बंधे हुए हैं—एक समिति को ब्रिटिश प्रान्तों का प्रतिनिधान करने के लिये भारतीय विधान-परिषद ने नियुक्त किया था और दूसरी भारतीय रियासतों द्वारा मनोनीत सदस्यों की थी। ये इसलिये नियुक्त की गई थीं कि दोनों भागों में लागू होने के लिए एक विधान का मसविदा तैयार करने का आधार निश्चित करें। निगोशियेटिंग कमेटियों की रिपोर्टों में दी गई छोटी-छोटी बातों में मैं नहीं जाना चाहता। परन्तु यदि मेरे माननीय मित्र पंडित कुंजरू समिति की रिपोर्ट देखें तो उनको यह विदित होगा कि उसमें एक स्पष्ट प्रावधान है कि निगोशियेटिंग कमेटी की रिपोर्ट से यह नहीं समझा जायेगा कि भारतीय संघ को

देशी रियासतों के राज्य क्षेत्र पर अधिकार जमाने की खुली छुट्टी है। मेरा निवेदन यह है कि यदि वह दो दलों का समझौता है—मेरा आशय प्रसंविदा अथवा संविदा से नहीं है—तो इस समय उस समझौते को मान लेने में ही भलाई है। एक बात मैं और बताना चाहता हूं—विधान में एक और अनुच्छेद है—और मुझे खेद है कि मेरे मित्र कुंजरू ने उसका कोई उल्लेख नहीं किया—वह अनुच्छेद 212 है, जो बड़ा महत्त्वपूर्ण है और मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि रियासतों के सम्बन्ध में भारतीय विधान के मसौदे में किन-किन सम्भावनाओं की व्यवस्था की गई है। माननीय सदस्यों ने यह देखा होगा कि अनुच्छेद 3 में भारतीय रियासतों को भारतीय संघ में ऐसे संघ-विलेखों के आधार पर सम्मिलित करने की व्यवस्था की गई है, जिन्हें भारतीय रियासतें भारतीय संघ को लिख कर देंगी। जब इस प्रकार कोई रियासत भारतीय संघ में आती है, तो केन्द्रीय सरकार के सामने, प्रान्तों के सामने, उसकी स्थिति वही होगी जो संघ-विलेख की शर्तों के अनुसार होनी चाहिए, पर संघ-विलेख ही भारतीय रियासतों को भारतीय विधान में सम्मिलित करने का एकमात्र साधन नहीं है। विधान में एक और बड़ा महत्त्वपूर्ण प्रावधान है। वह अनुच्छेद 212 है, उसमें यह व्यवस्था की गई है कि किसी भारतीय रियासत का राजा अपनी रियासत के सम्बन्ध में अपनी समस्त प्रभुता को भारतीय संघ को हस्तांतरित कर सकता है। प्रावधान 212 के अन्तर्गत, जब कि समस्त प्रभुता-जन्य अधिकार हस्तान्तरित कर दिये गये हों तो उस राजा का राज्य-क्षेत्र एक प्रकार से भारत का राज्य-क्षेत्र हो जाता है और समस्त प्रभुता-जन्य अधिकार भारतीय संघ को प्राप्त हो जाते हैं। इस प्रकार जब अनुच्छेद 212 के अंतर्गत अधिकार दे दिये जाते हैं तो वह राज्य-क्षेत्र, जिसके प्रभुता-जन्य अधिकार राजा द्वारा पूर्णतः भारतीय संघ को हस्तान्तरित कर दिये गए हैं। भारत के प्रान्त के अनुसार शासित किया जा सकेगा और उस दशा में विधान का दूसरा भाग जो भारतीय प्रान्तों के विधान की व्याख्या करता है, अपने आप उस रियासत पर लागू हो जायेगा या केन्द्र द्वारा प्रशासित क्षेत्रों की भांति उस पर भी शासन किया जा सकेगा जिससे कि प्रधान तथा केन्द्रीय पार्लियामेंट की उस विशेष राज्य-क्षेत्र में किसी भी प्रकार के शासन चलाने का पूर्ण अधिकार हो। यदि मैं इस शब्दावलि का प्रयोग कर सकूं तो मैं सभा से निवेदन करूंगा कि इस विषय में सुधबुध खोने की आवश्यकता नहीं हैं। यदि हम थोड़ा सब्र से काम लें तो इसमें सन्देह नहीं कि हमारी भारतीय रियासतों के मंत्री

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

महोदय, जिन्होंने कि हमारे विधान-निर्माण कार्य आरम्भ करने के पूर्व जो उपद्रव विद्यमान थे, उनको कम करने के लिये इतना महान कार्य किया है, उन प्रभुता-जन्य अधिकारों का यथोचित प्रयोग करेंगे, जिसे भारतीय संघ ने प्राप्त कर लिया है और भविष्य में उपद्रवों को और भी कम होने देंगे और भारतीय रियासतों को समझा-बुझा कर और उन से उन्हीं प्रावधानों को स्वीकार करा कर, जो हमने देशी रियासतों के लिये भी रखे हैं और या 212 धारा का अनुसरण कराके और हमको प्रभुता-जन्य अधिकारों का अर्पण कराके एक व्यवस्था स्थापित करेंगे, जिससे कि भारतीय संघ भारतीय रियासतों से उसी प्रकार का व्यवहार कर सके जिस प्रकार का व्यवहार वह प्रान्तों के साथ करने में समर्थ है।

मैं निवेदन करता हूं कि अभी तो इसी में बुद्धिमानी है कि दोनों निगोशियेटिंग कमेटियों ने जो कुछ तय किया है उसका हम आदर करें और उसको तब तक मानें जब तक कि दोनों पक्षों से प्रीतिपूर्वक, शांतिपूर्वक और सम्मानपूर्वक आगे होने वाले संविदा में मूलभूत परिवर्तन न करा लें।

***उपाध्यक्षः** अब मैं पं. हृदयनाथ कुंजरू के संशोधन के अनुसार संशोधन संख्या 150 के परिवर्तित रूप पर मत लेता हूं। (*बाधाएं*) कृपया जिस प्रकार मैं कार्रवाई का संचालन करना चाहता हूं, उस प्रकार मुझे संचालन करने दीजिये।

***माननीय पं. गोविन्द बल्लभ पन्त** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): श्रीमान् मेरी समझ में नहीं आता कि आप पं. हृदयनाथ कुंजरू के संशोधन के अनुसार परिवर्तित संशोधन पर सभा का मत किस प्रकार ले रहे हैं। मेरी समझ से सर्वप्रथम आपको पं. कुंजरू के संशोधन पर मत लेना चाहिये और उसके पश्चात् दूसरे संशोधन को लेना चाहिए। प्रारंभ में उसे लेना और दोनों को मिला देना ठीक नियमानुसार नहीं होगा।

***उपाध्यक्षः** कृपया ध्वनि-वर्द्धक यंत्र पर आइये।

***माननीय पं. गोविन्द बल्लभ पंतः** मेरा निवेदन यह है कि डा. अम्बेडकर का यह संशोधन पं. कुंजरू के संशोधन के अनुसार परिवर्तित रूप में मतदान के

लिये रखा जा रहा है और मैं यह चाहता हूं कि आप ऐसा न करें। मेरा निवेदन यह है कि प्रथम आप पं. कुंजरू के संशोधन पर मत लें। यदि वह स्वीकार कर लिया जाये, तब आपको परिवर्तित संशोधन पर मत लेना होगा। यदि वह अस्वीकार किया गया तो आपको डा. अम्बेडकर के मूल प्रस्ताव पर मत लेना होगा। दोनों को मिला देने से कुछ गड़बड़ी हो जायेगी।

***श्री एच.वी. कामतः** प्रो. के.टी. शाह के संशोधन संख्या 149 का क्या हुआ?

***उपाध्यक्षः** यदि डा. अम्बेडकर का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया जाता है तो प्रो. के.टी. शाह का संशोधन अपने आप ही गिर जाता है। इसी कारण मैं डा. अम्बेडकर के प्रस्ताव को ले रहा हूं। यही सरल विधि है। 149वां संशोधन शब्दों को पूर्णतया बदल देने के सम्बन्ध में है।

अच्छा, तो हम सर्वप्रथम पं. कुंजरू के संशोधन पर मत लेंगे।

***माननीय श्री घनश्याम सिंह गुप्तः** श्रीमान्, मैं एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न करना चाहता हूं। मेरे विचार से माननीय पं. कुंजरू को ठीक जवाब मिल गया है। साधारण नियम यह है कि जो वाद-विवाद आरम्भ करता है, उसे उत्तर देने का अधिकार है, यदि उस अधिकार को संक्षिप्त न किया गया हो। विधान निर्माण-सम्बन्धी इस सभा की कार्य पद्धति का संचालन करने वाले नियमों में नियम 111 में दिया हुआ है कि...

***उपाध्यक्षः** क्या यह नियम यहां लागू होता है?

***माननीय श्री घनश्याम सिंह गुप्तः** नहीं, क्योंकि हमारे पास तत्सम्बन्धी नियम नहीं है और कारण स्पष्ट है। हम यहां एक बड़े महत्त्वपूर्ण विषय पर विचार कर रहे हैं। और संशोधन पेश करने वालों को, जिन्होंने कि वास्तव में एक सारयुक्त प्रस्ताव सभा के समक्ष रखा है, सभा में वाद-विवाद सुनने के पश्चात् बहुत कुछ उस विषय पर कहना है। इस कारण, यही बात कि हमारी कार्यपद्धति के नियमों में नियम संख्या 111 के समान कोई नियम नहीं है, स्पष्ट सिद्ध करती है कि विधान पर संशोधन पेश करने वाले को उत्तर देने का अधिकार है। और यह है

[माननीय श्री घनश्याम सिंह गुप्त]

भी स्वाभाविक, क्योंकि विषय बहुत ही महत्त्वपूर्ण है, वाद-विवाद के साधारण नियम हमारी कार्यपद्धति में भी लागू होने चाहिये। मेरा यही निवेदन है।

***श्री आर.के. सिधवा:** श्रीमान्, मेरे विचार से माननीय पंडित कुंजरू को अपने संशोधन के सम्बन्ध में उत्तर देने का अधिकार नहीं है। मेरा तर्क यह है कि जिस नियम का उल्लेख मेरे मित्र श्री घनश्यामसिंह गुप्त ने किया है, उस नियम में यह दिया हुआ है कि संशोधन पेश करने वाले को उत्तर देने का अधिकार नहीं है। उनका तर्क यह है कि हमारी परिषद् में ऐसा कोई नियम नहीं है इसलिये हम यह कह सकते हैं कि संशोधन पेश करने वाले को ऐसा करने का अधिकार है। इसके विरोध में मैं यह कहूंगा कि मैंने किसी महत्त्वपूर्ण विधान-मंडल या परिषद् में इस अधिकार का प्रदान किया जाना नहीं सुना। जब इस परिषद् का कोई नियम नहीं है, तो विधान परिषद् (विधान-मंडल) के नियम लागू होने चाहिये, क्योंकि कानून निर्माण कार्य के लिये हमारे देश में वही सर्वोच्च संस्था है। इस सम्बन्ध का हमारी इस परिषद् में कोई नियम नहीं है। अत: सर्वोच्चता में द्वितीय स्थान प्राप्त विधायिनी सभा के नियमों को मान्य होना चाहिए। मेरे विचार से यह बहुत महत्त्वपूर्ण विषय है। हमें कुछ नियमों के अनुसार कार्य-संचालन करना चाहिये। मैंने ऐसी किसी महत्त्वपूर्ण विधान-मंडल अथवा अन्य संस्था और यहां तक किसी स्थानीय संस्था को भी संशोधन पेश करने वाले को उत्तर देने का अधिकार देते नहीं सुना। इसलिये मैं निवेदन करता हूं कि श्री गुप्त द्वारा उपस्थित किये गये विचार तथा तर्क मान्य नहीं है। और यह इस तर्क के आधार पर कि हम एक अन्य समान संस्था के नियमों द्वारा अनुशासित होते हैं, जो संशोधन के पेश करने वाले को उत्तर देने का अधिकार नहीं देती है।

***माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टंडन** (सयुंक्त प्रांत : जनरल): श्रीमान्, मेरे मित्र सिधवा बड़े बहादुर हैं। उन्होंने एक ऐसे विषय को लिया है, जिसके सम्बन्ध में आप मुझे यह कहने की आज्ञा देंगे कि उनको पूर्ण ज्ञान नहीं है। उन्होंने कहा कि वे किसी महत्त्वपूर्ण विधान-मण्डल से परिचित नहीं हैं, जो संशोधन पेश करने वाले को उत्तर देने का अधिकार देती हो। श्रीमान्, मेरा निवेदन है कि देश में

संयुक्त प्रान्त यथेष्ट रूप में महत्त्वपूर्ण प्रान्त है और मैं आपको यह बता सकता हूं कि संयुक्त प्रांत की विधायिनी सभा का इस सम्बन्ध में यह निश्चित तथा स्पष्ट नियम है कि संशोधन पेश करने वाले को उत्तर देने का अधिकार है। (वाह, वाह) यह विधेयकों के सम्बन्ध में है। विधेयक के किसी खण्ड में संशोधन पेश करने वाले को उत्तर देने का अधिकार है। यह जरूर है कि विधेयक से सम्बन्धित विभाग के मंत्री को अन्तिम शब्द कहने का अधिकार है। परन्तु, यह दूसरा विषय है। पर यह साफ है कि विधेयक के वाक्य-खंड में संशोधन पेश करने वाले को उत्तर देने का अधिकार दिया जाता है।

यहां मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि और इस बात की ओर मेरे मित्र ने इशारा करके ठीक ही किया है कि हम एक महत्त्वपूर्ण विषय पर विचार कर रहे हैं। मेरे विचार से यह उचित होगा कि संशोधन पेश करने वाले को उन आलोचनाओं का उत्तर देने का अधिकार दिया जाये, तो आलोचनायें उस विषय पर की गई हैं, जिसको उन्होंने सभा के समक्ष रखा हैं यदि आप चाहते हैं तो आप तत्सम्बन्धी मंत्री को अन्तिम शब्द कहने की आज्ञा दे सकते हैं। परन्तु मैं यह निवेदन करता हूं कि संशोधन पेश करने वाले को अपने प्रकट किये हुये विचारों की आलोचना का उत्तर देने की आज्ञा होनी चाहिए।

***श्री आर.के. सिधवा:** कितने प्रान्तीय विधानमंडलों में ऐसा नियम है?

***पं. हृदयनाथ कुंजरू:** उपाध्यक्ष महोदय, क्या मैं अपनी स्थिति थोड़ी और अधिक स्पष्ट कर दूं, जिससे कि उसके सम्बन्ध में कोई भ्रम न रहे। कुछ समय पूर्व विधान का मसौदा हमें दिया गया था। उसमें अनेकों प्रकार की रियासतों के राज्यक्षेत्रों के पुनर्विभाग सम्बन्धी एक प्रावधान है। डा. अम्बेडकर ने सभा के समक्ष विधान के मसौदे में दिये हुये प्रावधान को नहीं रखा। जिस बात की ओर उन्होंने हमारा ध्यान आकर्षित किया, वह मूल प्रावधान पर संशोधन था और अपने प्रस्ताव को पेश करते हुये वे केवल अपने प्रस्ताव के औचित्य पर नहीं बोले, वरन् विधान के मसौदे में दिये हुये मूल प्रस्ताव पर भी बोले। अत: यह नहीं कहा जा सकता कि दुबारा बोलते समय वे किसी ऐसे विचार को रखेंगे जिसको वह पहले नहीं रख सके। मेरे विचार से उन्होंने अपने बोलने का अधिकार समाप्त कर दिया। फिर भी अन्य सदस्यों की बातों के उत्तर देने की उनको आज्ञा दे

[पं. हृदयनाथ कुंजरू]

दी गई। यद्यपि उन्होंने जो कुछ कहा, उस सबसे अथवा उसके अधिकांश भाग से मैं सहमत नहीं हूं, पर उसे सुनकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। परन्तु इस व्यवस्था से उन सदस्यों के अधिकार के सम्बन्ध में जो संशोधन पेश करते हैं, एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठ खड़ा हुआ है और इस प्रश्न का मैं उत्तर चाहता हूं। यदि मंत्री को, जो संशोधन पेश करता है, उत्तर देने का अधिकार है तो क्या उसी अवस्था में अन्य किसी सदस्य को वह अधिकार नहीं है?

***श्री घनश्याम सिंह गुप्त:** एक औचित्य प्रश्न...

***उपाध्यक्ष:** मैं अपनी व्यवस्था दे रहा हूं। नियमों में ऐसी कोई बात नहीं मालूम होती जो संशोधन पेश करने वाले को उत्तर देने का अधिकार प्रदान करती हो। यदि डा. अम्बेडकर से मैंने उत्तर देने के लिये कहा था तो वह इस कारण था कि उनसे कुछ प्रश्न किये गये थे और मैंने यह ठीक और उचित समझा कि अपनी स्थिति स्पष्ट करने का उन्हें एक अवसर दिया जाये। यह मेरी व्यवस्था है।

अब मैं पंडित कुंजरू के संशोधन का मत लेता हूं। प्रश्न यह है कि:

''संशोधनों की सूची में संशोधन संख्या 150 के अनुच्छेद 3 के परादिक के वाक्य-खंड (ब) ''Previous Consent'' शब्दों के स्थान में ''The Views'' शब्द रख दिये जायें और ''Has Been'' शब्दों के स्थान में ''Have Been'' शब्द रखे जायें।''

प्रस्ताव अस्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है कि:

''अनुच्छेद 3 के वर्तमान परादिक के स्थान में निम्न परादिक रखा जाये परन्तु इस आशय का कोई भी विधेयक पार्लियामेंट की किसी भी सभा में नहीं रखा जायेगा जब तक कि उस पर अध्यक्ष की सिफारिश न हो और

(अ) यदि विधेयक में दिया हुआ प्रस्ताव प्रथम अनुसूची के प्रथम भाग में उस समय उल्लिखित रियासत या रियासतों के नाम अथवा सीमाओं पर प्रभाव डालता हो तो जब तक अध्यक्ष द्वारा रियासत या प्रत्येक रियासत के विधान-मंडल के विधेयक को उपस्थित करने के प्रस्ताव और उसके प्रावधान इन दोनों विषयों पर विचारों का प्राप्त न कर लिया गया हो; और

(ब) यदि विधेयक में दिया हुआ प्रस्ताव अनुसूची के तीसरे भाग में उस समय उल्लिखित रियासत या रियासतों के नाम अथवा सीमाओं पर प्रभाव डालता हो तो जब तक कि रियासत या प्रत्येक रियासत के प्रस्ताव के लिये पूर्व स्वीकृति प्राप्त न कर ली गई हो।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि प्रो. के.टी. शाह का संशोधन तथा संशोधन संख्या 175 तक के समस्त संशोधन डा. अम्बेडकर के संशोधन की स्वीकृति के पश्चात् गिर जाते हैं। अब हम संख्या 176 को ले सकते हैं।

***श्री लक्ष्मी नारायण साहू:** मैं अपने नाम के संशोधन सं. 154 को पेश करना चाहता हूं।

***उपाध्यक्ष:** वह संशोधन उस अनुच्छेद के स्थान पर अन्य पदावली रखे जाने के सम्बन्ध का है जिसे पूरा का पूरा हटा दिया गया है। अत: उस पर यहां वाद-विवाद नहीं हो सकता।

(संशोधन सं. 176 पेश नहीं किया गया।)

हमारे पास एक संशोधन सं. 176 (अ) बेगम ऐज़ाज रसूल का है। वह राष्ट्रीय भाषा के सम्बन्ध का है। अन्य संशोधनों की भांति इसे भी उचित स्थान के लिये स्थगित किया जाये।

अनुच्छेद 3 समाप्त होता है। क्या कोई समूचे अनुच्छेद पर वाद-विवाद करना चाहता है?

***पं. लक्ष्मीकांत मैत्र** (पश्चिमी बंगाल : जनरल): यदि किसी माननीय सदस्य को इस समूचे अनुच्छेद पर बोलने दिया जाता है तो उसकी क्या स्थिति होगी? क्या फिर डा. अम्बेडकर को उसका उत्तर देने के लिये कहा जायेगा?

***उपाध्यक्ष:** कदापि नहीं।

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र:** इस समूचे अनुच्छेद पर अभी विचार समाप्त नहीं किया गया है और डा. अम्बेडकर ने अभी तक केवल संशोधन का उत्तर दिया है, समूचे अनुच्छेद का नहीं।

***उपाध्यक्षः** माननीय सदस्य का वक्तव्य हम सुनेंगे और यदि वह पुरानी बातें दुहरायेंगे तो उनसे रुकने के लिये हम निवेदन करेंगे।

***पं. लक्ष्मीकांत मैत्रः** अतः डॉ. अम्बेडकर को उत्तर देने का अधिकार नहीं है।

***उपाध्यक्षः** नहीं।

***श्री एम. अनन्तशयनम आयंगर** (मद्रास : जनरल): वह कल्पित बात है। ऐसा प्रश्न उठता ही नहीं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद** (बिहार : जनरल): यह अनुच्छेद तीन आशयों की पूर्ति के लिये है...

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्त प्रान्त : जनरल) इसमें कार्यपद्धति का एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न उपस्थित होता है। इस अनुच्छेद पर अनेकों संशोधन रखे गये थे, परन्तु आपने केवल दो या तीन को ही पेश करने की आज्ञा दी और उसके पश्चात आपने दो पर मत लिया। अन्य संशोधनों को पेश करने का अवसर ही न मिला। मेरे विचार से समस्त संशोधनों को पेश कर लेने दिया जाता और फिर मत लिया जाता। अन्यथा अन्य सदस्यों को अपने संशोधनों के मूल्य आंकने का अवसर नहीं मिलेगा। यदि उनको सभा में पेश करने दिया जाता तो शायद सभा उनमें से कुछ को स्वीकार कर लेती।

***उपाध्यक्षः** किन संशोधनों को पेश नहीं किया गया?

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** संख्या 174 तक के समस्त संशोधनों को।

***उपाध्यक्षः** उनका प्रश्न ही नहीं उठता। डा. अम्बेडकर के प्रस्ताव को स्वीकार कर लेने के कारण उनको व्यवहारिक रूप में अस्वीकार कर दिया गया।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** उनको पेश तो करने दिया जाता।

***उपाध्यक्षः** आपने ठीक समय पर यह क्यों नहीं बताया?

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** भविष्य में इस पर ध्यान रखा जाये।

***उपाध्यक्षः** इस बात को ध्यान में रखा जाएगा।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** यह अनुच्छेद निम्न तीन आशयों की पूर्ति के लिये है:

(अ) किसी प्रान्त या रियासत की सत्ता मिटाने को,

(ब) सरदार पटेल को शक्तिशाली बनाने को,

(स) नये प्रान्तों की उत्पत्ति करने को।

दो मौलिक बातों पर यह अनुच्छेद खामोश है: अर्थात्

(1) इस अनुच्छेद के प्रावधानों के अन्तर्गत नवनिर्मित रियासतों के वैधानिक अधिकार के बारे में भारत की भावी पार्लियामेंट के बहुसंख्यक दल की इच्छा पर यह बात छोड़ दी गई है कि वह केवल साधारण बहुमत से निश्चय करने की अति सुगम विधि द्वारा यह निश्चय करे कि नई रियासत को प्रथम अनुसूची के प्रथम, द्वितीय अथवा तृतीय किस भाग में रखा जाए। (2) इस अनुच्छेद के प्रावधानों के अन्तर्गत किन परिस्थितियों में पार्लियामेंट प्रकार्य कर सकती है। पार्लियामेंट को अनुचित रीति से प्रान्तों को तोड़ने और संयुक्त करने का कानूनी अधिकार है। इस अनुच्छेद के प्रावधानों के अन्तर्गत ऐसे कोई प्रतिबंध नहीं है कि जो पार्लियामेंट को इस अधिकार के निर्बाध प्रयोग से रोकते हों।

मैं इस विषय पर एक उदाहरण देता हूं। यदि केन्द्र में अधिकार प्राप्त बहुसंख्यक दल का बिहार प्रान्त को मिटाने का विचार होवे तो इस अनुच्छेद के प्रावधानों के अन्तर्गत दी हुई दो विधियों में से किसी एक विधि द्वारा वह सरलता से ऐसा कर सकेगा, जैसे:

1. बिहार को भागों में विभाजित किया जा सकेगा और समस्त राज्य क्षेत्र को सीधे भारतीय सरकार के शासनाधिकार में रखा जा सकेगा। अनुच्छेद का स्पष्ट अर्थ यह है कि किसी राज्य को प्रथम अनुसूची के प्रथम, द्वितीय अथवा तृतीय किसी भाग में रखने का पूरा अधिकार भारतीय सरकार को है।

2. बिहार को उड़ीसा में मिलाया जा सकेगा और इस प्रकार बने हुये नये प्रान्त का शासन पूर्णतया केन्द्रीय पार्लियामेंट के अधीन किया जा सकेगा।

भारतीय सरकार को उन प्रान्तों के शासनाधिकार प्राप्त करने का अधिकार होना

[श्री ब्रजेश्वर प्रसाद]

चाहिए। जिनका शासन ठीक नहीं है या जो विधान के अनुसार नहीं है। इसी प्रकार उसे उन अड़ियल प्रान्तों के दंड देने का अधिकार होना चाहिए। जो केन्द्र से विलग होने की भावना के कारण केन्द्र से दूर भागते हैं।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, दूसरा कारण जिसके लिये यह अनुच्छेद रखा गया है वह सरदार पटेल को शक्तिशाली बनाना है। देशी रियासतों की वैधानिक स्थिति अभी अनिश्चित है।

***पं. हृदयनाथ कुंजरू:** भारतीय रियासतें, न कि देशी रियासतें।

श्री ब्रजेश्वर प्रसाद: भारतीय रियासतों की अपेक्षा देशी रियासतें ही अधिक उपयुक्त हैं। भारतीय राष्ट्रीयता की श्रृंखला में देशी रियासतें सदैव अत्यन्त शक्तिहीन कड़ी के समान रही हैं। इन समस्याओं के सुलझाने में बड़ी सावधानी और ध्यान से काम लेना चाहिए। देशी रियासतों में विधान-परिषदों की वर्तमान सनक को रोकना चाहिए। रियासतों की सेनाओं को हटा देना चाहिए। देशी रियासतों को राज्यों के मंत्रणालय (Ministry of States) और भारतीय सरकार के संचालन, निरीक्षण और नियंत्रण के अधीन ले लेना चाहिए। प्रथम अनुसूची के द्वितीय भाग में उनको रखना वांछनीय होगा। अनेकों रियासतों के मिल कर संघों के बनाने में न्यूनतम अवरोधक प्रणाली को अंगीकार किया गया है। इन संघों का निर्माण घातक प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन देगा। इन समस्त राज्य-क्षेत्रों को सीधे केन्द्रीय प्रशासन के अधीन लाना सरदार पटेल के अधिकार में है। रियासत निवासियों के मनों में इस भ्रम के उत्पन्न होने की आशंका से बचने के लिये कि हमारी प्रवृत्ति निरकुंश तथा अनियंत्रित राज्यक्रम की ओर है, मैं उन लोगों में से जो इस विधान-परिषद में रियासत की जनता के प्रतिनिधि हैं किसी को राज्य के उपमंत्री के पद पर नियुक्त करने के लिये निवेदन करता हूं।

तीसरा आशय जिसके लिये यह अनुच्छेद सोचा गया है, वह उन लोगों के लिए कुछ गुंजाइश करने के लिए है जो कि एक भाषा-भाषी प्रान्त-निर्माण के महारथी हैं। जहां तक यह अनुच्छेद इस आशय की पूर्ति करता है मैं इसका विरोध करता हूं।

इस बात पर बहुत उपद्रव किया जा रहा है कि सम्प्रदाय के एक बड़े विभाग की चिरसंचित आशाओं, अभिलाषाओं और उत्कण्ठाओं का विरोध करना प्रजातंत्रवाद

के विरुद्ध है। परन्तु किसी बात को प्रभावोत्पादक होने के लिए वास्तव में पुष्ट होना चाहिए। किसी प्रकार का पुष्ट प्रजातंत्रवाद उस महान भूल को निर्दोष नहीं बता सकता जो इस देश के साथ 15 अगस्त सन् 1947 ई. के दु:खदायी विभाजन द्वारा की गई।

***उपाध्यक्ष:** विचारान्तर्गत अनुच्छेद से इसका कोई सम्बन्ध नहीं है। माननीय सदस्य छलागें ले रहे हैं और 5 मिनट समाप्त भी हो गये।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** श्रीमान्, मैंने आरम्भ में ही कह दिया था कि मुझे 10 मिनट की आवश्यकता है और अभी तक मैंने 5 मिनट ही लिये हैं। खैर मैं हर प्रकार से आपके हाथों में हूं।

***उपाध्यक्ष:** उसी प्रकार मैं भी आपके हाथों में हूं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** प्रजातंत्र से राष्ट्रीयता मुझे अधिक प्रिय है। प्रजातंत्र के सम्बन्ध में यह कहना बड़ी तुच्छ धारणा है कि प्रशासन-सम्बन्धी समस्त कार्यों पर अनुमति प्राप्त करना और स्वीकृति लेना परमावश्यक है। ऐसा राष्ट्र केवल विप्लव तथा अराजकता की ओर अग्रसर होगा।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी** (आसाम : जनरल): श्रीमान् एक औचित्य प्रश्न है। मैं नहीं समझ पाता कि कौन से प्रावधान के अन्तर्गत सभा में संशोधनों के स्वीकार किये जाने के पश्चात् आपने इस प्रकार के भाषण की आज्ञा दे दी है। मुझे ऐसा कोई प्रमाण नहीं मिलता जिसमें किसी संशोधित प्रस्ताव अथवा विधेयक के किसी संशोधित प्रावधान को सभा में लाने की आज्ञा दी गई हो और उस पर वाद-विवाद करने दिया गया हो। यदि यहां उपस्थित प्रत्येक व्यक्ति को इस वाक्य-खंड के वाद-विवाद की आलोचना लिखने दी जाए और उस वक्तव्य को सभा पर लादा जाए तो उसका कहीं अन्त नहीं होगा। ऐसी कोई कार्य-प्रणाली नहीं है, जो संशोधनों के स्वीकार किये जाने के पश्चात् इस प्रकार के भाषण देने की आज्ञा देती हो।

***उपाध्यक्ष:** मैं बता सकता हूं कि एक ऐसा प्रमाण है जबकि दूसरे अनुच्छेद के अन्त में श्री कामत ने वक्तव्य दिया था और किसी क्षेत्र से भी उस समय कोई आपत्ति नहीं उठाई गई थी।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** प्रजातंत्र का सार यह है कि जनता राजनैतिक जीवन के उच्च लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये उत्सुक हो। जनता की कोई मांग जो

[श्री ब्रजेश्वर प्रसाद]

इस प्रमुख पूर्वाकांक्षित अभिलाषा की पूर्ति नहीं करती है तो वह प्रजातंत्रात्मक नहीं है।

***उपाध्यक्षः** यह सभा का समय बरबाद करना है।

प्रश्न यह है कि:

''संशोधित रूप में अनुच्छेद 3 विधान का अग बन जाये।''

***सरदार हुकम सिंह** (पूर्वी पंजाब : सिख): जब तक उन संशोधनों पर जो रोक लिये गये हैं निर्णय नहीं किया जाता, तब तक इस अनुच्छेद को सभा के समक्ष नहीं रखा जा सकता।

***उपाध्यक्षः** उनको छोड़ दिया गया है, क्योंकि डा. अम्बेडकर के संशोधन को सभा द्वारा स्वीकार किये जाने के पश्चात् वे नियमानुकूल नहीं हैं।

***श्री राजबहादुर** (संयुक्त मत्स्य राज्य): श्रीमान्, मैं इस बात की ओर आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं कि माननीय सदस्य श्री ब्रजेश्वर प्रसाद ने भारतीय रियासतों के लिये ''देशी रियासतें (Naive states)'' शब्दों का प्रयोग किया है। मैं ''देशी'' शब्द के प्रयोग पर घोर आपत्ति प्रकट करता हूं और आपसे निवेदन करता हूं कि ऐसे शब्दों का प्रयोग न करने दिया जाये।

***एक माननीय सदस्यः** ऐसे शब्दों को कार्रवाई के विवरण में से निकाल दिया जाए।

***उपाध्यक्षः** यह प्रश्न उपस्थित नहीं होता।

प्रश्न है कि:

''संशोधित रूप में अनुच्छेद 3 विधान का अंग बन जाए।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 4

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** श्रीमान्, कार्य-प्रणाली के सम्बन्ध में क्या मैं एक ऐसा सुझाव उपस्थित कर सकता हूं, जिससे कि समय व्यर्थ बरबाद न हो। आपने अनुच्छेद 4 पर विचारारम्भ करने के लिये कहा है और आपने

श्री नज़ीरुद्दीन अहमद को अपना संशोधन पेश करने के लिये कहा है। जो सदस्य वाद-विवाद में भाग लेना चाहते हैं उन सबको अनुच्छेद और अनुच्छेद के साथ-साथ संशोधनों पर बोलने दिया जाए। जिससे कि जब आप समूचे अनुच्छेद को रखें, तब फिर एक बार और दुहराने की आवश्यकता न पड़े। यदि समस्त संशोधन समाप्त कर दिये जाते हैं तो फिर कोई भाषण नहीं हो सकता। यह आपके अधिकार की बात है और इस प्रकार के आदेश देने में आपको किसी प्रकार की रुकावट नहीं है।

***उपाध्यक्ष:** मैं आपके सुझाव को स्वीकार करता हूं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद** (बंगाल : मुस्लिम): श्रीमान्, मैं यह संशोधन पेश करता हूं कि:

''अनुच्छेद 4 के वाक्य-खंड (1) में से ''of this Constitution'' शब्द हटा दिये जायें और समस्त विधान के मसौदे में जहां-जहां ये शब्द इसी प्रसंग में मिलते हों वहां से हटा दिये जायें; और अनुच्छेद 303 के वाक्य-खंड (1) में एक नई व्याख्या (ब ब) रखी जाए:

''(ब ब) 'अनुच्छेद' का अर्थ इस विधान के अनुच्छेद से है।''

इस देश के साधारण कानून-निर्माण में जब कभी हम किसी धारा का उल्लेख करते हैं तो हम 'इस एक्ट की धारा' शब्दों को बार-बार नहीं कहते। जहां तक इस विधान का सम्बन्ध है, हमने 'धारा' शब्द के स्थान में ''अनुच्छेद'' शब्द का प्रयोग किया है और ''एक्ट के'' शब्द इस कारण लागू हो ही जाते हैं कि वे ''सामान्य वाक्य-खंडों के एक्ट'' के अन्तर्गत हैं। मैं निवेदन करता हूं कि एक नई व्याख्या (ब ब) को स्वीकार करके हमें इस विधान में उसी विधि का प्रयोग करना चाहिये। जब कभी हम किसी अनुच्छेद का उल्लेख करते हैं, तो यह स्पष्ट है कि आशय सदैव इसी विधान के अनुच्छेद से होता है। मैं यह सम्मानपूर्वक बताता हूं कि इस विधान के मसौदे में कई स्थलों पर ''of this Constitution'' शब्दों के दिये बिना अनुच्छेद की संख्या दी गई है। इस अनुच्छेद में भी एक स्थान पर हमें ''of the Constitution'' शब्द मिलते हैं और दूसरे स्थान पर नहीं मिलते। हम इन शब्दों को समान रूप से सब स्थलों पर छोड़ सकते हैं।

***उपाध्यक्ष:** माननीय सदस्य अनुच्छेद 4 पर अपने समस्त संशोधन एक-एक करके कार्यावलि की संशोधन संख्या 181 तक यथासम्भव संक्षिप्त रूप में पेश कर सकते हैं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** मैं संक्षेप में कहूंगा। परन्तु इस बात का ध्यान रखा जाये कि मेरे इस संशोधन से कम से कम 68 संशोधनों पर विचार हो जाएगा। अनुसूची के साथ हम ''of this Constitution'' शब्दों का दुहराना छोड़ गये हैं। जब आप किसी अनुसूची का उल्लेख करते हैं तो आप उस अनुसूची की संख्या का उल्लेख करते हैं तथा यह नहीं कहते कि ''इस विधान की'' अमुक-अमुक अनुसूची। यह एक विशेष व्याख्या के कारण है, जो स्वयं इसी विधान के मसौदे में दी हुई है। मैं सभा का ध्यान अनुच्छेद 303 के खंड (1) के पद (5) की ओर आकर्षित करना चाहता हूं। ''अनुच्छेद'' का अर्थ है ''इस विधान का अनुच्छेद''। यह बहुत आवश्यक प्रावधान है। इस समानता के कारण ''अनुच्छेद'' का अर्थ भी इस विधान के अनुच्छेद से होना चाहिये। मैं निवेदन करता हूं कि जो संशोधन मैंने पेश किया है वह 303 (1) के पद (5) के समान है।

अब मैं 178 से 181 तक अन्य प्रस्तावों को पेश करूंगा। मैं पेश करता हूं कि:

''अनुच्छेद 4 के वाक्य-खंड (1) में 'article 2 or article 3' शब्दों के स्थान में 'article 2 or 3' शब्द और अंक रखे जाये।''

मैं निवेदन करता हूं कि ''article'' शब्द को उस प्रकार दुहराने की आवश्यकता नहीं है, जैसा कि खंड (1) में और इस विधान के मसौदे में अनेकों स्थलों पर लाया गया है।

इसके बाद मैं पेश करता हूं कि:

''अनुच्छेद 4 के खंड (1) में 'article 2 or article 3' शब्दों के स्थान में 'article 3' शब्द और अंक रखे जायें।''

इसके पश्चात् मैं पेश करता हूं कि:

''अनुच्छेद 4 के खंड (1) में 'shall contain such provisions for' शब्दों के स्थान में 'shall also provide for' शब्द रखे जाये।''

यह बहुत साधारण संशोधन है।

अब मैं इस अनुच्छेद का अपना अन्तिम संशोधन पेश करता हूं कि:

''अनुच्छेद 4 के खंड (2) में, 'for the purpose of' शब्दों के स्थान पर 'within the meaning of' शब्द रखे जायें।''

यह केवल शाब्दिक संशोधन है।

***उपाध्यक्ष:** आगे वाले संशोधनों को अब एक-एक करके पेश किया जा सकता है। प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना का संशोधन सं. 182 इसके पश्चात् आता है। यद्यपि यह खंड 2 के हटाने के लिए है और इस कारण पेश नहीं करने दिया जा सकता है। फिर भी इस अनुच्छेद पर बोलने का मैं उनको अवसर दूंगा।

इसके पश्चात् तत्सम्बन्धी समूचे अनुच्छेद पर वाद-विवाद होगा।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** खंड (2) के हटाने के लिये मैं संशोधन संख्या 182 को पेश नहीं कर रहा हूं।

***श्री महबूब अली बेग साहब** (मद्रास : मुस्लिम): श्रीमान्, मैं संशोधन संख्या 184 पेश करता हूं कि:

अनुच्छेद 4 के खंड (2) में 'for the purpose of article 304' शब्दों के स्थान में 'under article 304' शब्दों को रखा जाये। वर्तमान शब्दों के रहने देने से किसी न किसी प्रकार की उलझन पैदा हो जाएगी। इसलिये हमें उन शब्दों के स्थान में 'under article 304' रख देना चाहिए।

***श्री एच.वी. कामत:** उपाध्यक्ष महोदय, आपकी आज्ञा से मैं बहुत संक्षेप में अपने माननीय मित्र मि. नजीरुद्दीन के संशोधन सं. 177 पर बोलूंगा।

आपके डा. अम्बेडकर को उत्तर देने के लिए बुलाने के पूर्व मैं उनसे यह निवेदन करता हूं कि यदि वे ऐसा समझते हों कि संशोधन सं. 177 अस्वीकार किया जाये तों वे अपने इस विरोध के समर्थन में कुछ तर्क उपस्थित करें न कि केवल अपने पुराने गुर को दुहरा दें कि ''मैं इस संशोधन का विरोध करता हूं।'' क्योंकि संशोधन पेश करने वाले मेरे मित्र ने जो तर्क उपस्थित किये हैं, उनके अलावा मैंने विधान सम्बन्धी प्रमाण-द्वितीय ग्रन्थमाला नामक पुस्तक में, जो कि परिषद् के कार्यालय द्वारा हमें दी गई थी, आस्ट्रेलिया, दक्षिण अफ्रीका, स्विट्जरलैंड और जर्मनी के सब विधानों को देखा है। मैंने उन सबको बड़े ध्यान

[श्री एच.वी. कामत]

से पढ़ा है और मुझे यह मालूम हुआ कि ''of this Constitution'' पद का इस प्रकार बार-बार का प्रयोग उनमें से किसी में नहीं मिलता है।

मेरे विचार से संक्षेप ही विधान की आत्मा या उसका सार है और हमें विधान को व्यर्थ तथा अनावश्यक शब्दों, पदों या वाक्यों के लादने से बचाने का प्रयत्न करना चाहिये। मैं देखता हूं कि हमारे विधान के मसौदे में इस ''of this Constitution'' पद का बार-बार घृणोत्पादक मात्रा में प्रयोग किया गया है। मेरे विचार से संशोधन तर्क-संगत और हानि-रहित है। हमें विधान के अनुच्छेदों की भाषा की ओर भी कुछ ध्यान देना चाहिये। अन्त में मैं डा. अम्बेडकर से फिर निवेदन करता हूं कि वे केवल ''मैं विरोध करता हूं'' के गुर की पुनरावृत्ति न करें, वरन् तर्क उपस्थित करें कि वे ऐसा क्यों करते हैं।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी:** मैं इस मंच पर इस संशोधन के विरोध द्वारा अपने मित्र मि. नजीरुद्दीन अहमद के प्रति सम्मान प्रदर्शन करने के लिये आया हूं (*हंसी*)। मुझे खेद है कि उन्होंने सभा का कुछ समय व्यर्थ खोया और मैं अपने को भी लांछित करता हूं कि उनके विरोध करने के प्रलोभन को नहीं रोक सका और ऐसा करके सभा का भी कुछ समय व्यर्थ खो रहा हूं। मैं अपने कर्त्तव्य से विमुख हूंगा, यदि मैं यहां उस प्रशंसा का उल्लेख न करूं, जो प्रशंसा हम सबों को उन चोरों के भले दल की करनी चाहिये, जो ईस्ट इंडियन रेलवे में हावड़ा से दिल्ली तक अपना कार्य करते हैं। हमें इस भले दल को इसलिये धन्यवाद देना चाहिये कि उसने केवल उसी थैले को चुराया, जिसमें हमारे मित्र मि. नजीरुद्दीन अहमद के अन्य अनेकों संशोधन थे और हमारे लिये यह चोरी सौभाग्यप्रद हुई है, अन्यथा इस प्रकार के संशोधन हमारे सामने हजारों और होते। मैं अपने मित्र प्रोफेसर शाह को भी चेतावनी देता हूं कि कहीं यह भला दल बम्बई और दिल्ली के बीच में भी काम शुरू न कर दे।

***उपाध्यक्ष:** यह विचारान्तर्गत विषय से कोई सम्बन्ध नहीं रखता है।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी:** प्रश्न यह है कि यदि उनके डिब्बे में से उनके थैले की चोरी न हुई होती, जब कि वे इस बार परिषद् में उपस्थित होने के लिए आ रहे थे, तो इस प्रकार के अनेकों और संशोधन होते जो कि मसविदा लेखकों पर आसानी से छोड़े जा सकते थे और सभा के समक्ष न लाये जाते। श्रीमान् मि. नजीरुद्दीन अहमद के संशोधनों के सम्बन्ध में मैं यह भी कहूंगा कि

यद्यपि उनमें से कुछ संशोधन बहुत अच्छे हैं, परन्तु क्योंकि वे उनके नाम से रखे जाते हैं, इस कारण उनका बिना किसी आलोचना के बहुधा विरोध किया जाता है। इसलिये मैं अपने माननीय मित्र से यह निवेदन करूंगा कि यदि वे बड़े गम्भीर संशोधन रखने के लिए प्रस्तुत हों, तो वे अपने नाम परिवर्तन करने का भी एक संशोधन रख दें, जिससे कि उनके संशोधनों पर गम्भीरतापूर्वक विचार किया जा सके।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** श्रीमान्, मैंने एक संशोधन की सूचना दी थी कि अनुच्छेद 4 का खंड (2) को छोड़ दिया जाये, परन्तु आपने उसे कार्यक्रम में नहीं आने दिया। मेरे विचार से किसी खंड के हटाने के लिये संशोधन पेश किया जा सकता है, परन्तु आपकी इस सम्बन्ध में जो व्यवस्था है, मैं उसको सिर झुकाकर स्वीकार करता हूं। मेरे विचार से अनुच्छेद 4 के एक विशेष पहलू पर हमें ध्यान देना चाहिए और उस पहलू की ओर मैं डा. अम्बेडकर का विशेष रूप से ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं। इस अनुच्छेद मैं डा. अम्बेडकर ने सीमाओं में परिवर्तन करने के लिये एक सरल विधि की व्यवस्था की है, क्योंकि वाक्य-खंड (2) में वे कहते हैं कि ''उपरोक्त कोई भी ऐसा कानून अनुच्छेद 304 के आशय के लिये इस विधान का संशोधन नहीं समझा जाएगा।'' अनुच्छेद 304 में यह दिया हुआ है कि विधान में किया जाने वाला कोई भी परिवर्तन दो तिहाई बहुमत से पास होना चाहिये और यहां इस बात की व्यवस्था की गई है कि जहां तक इस विधान के अनुच्छेद 2 और 3 से सम्बन्धित किसी भी कानून का सम्बन्ध है, वह इस विधान का संशोधन नहीं समझा जाएगा। श्रीमान्, मेरा व्यक्तिगत विचार है कि रियासतों की सीमाओं का परिवर्तन बड़ा महत्त्वपूर्ण विषय है और केवल बहुमत के आधार पर परिवर्तन नहीं होने देना चाहिए, क्योंकि रियासतों की सीमायें स्थायी होनी चाहियें और पार्लियामेंट के हर एक बहुमत के लिये, जब कि वह अधिकार संपन्न हो जाए, सीमाओं में परिवर्तन करना सम्भव नहीं होना चाहिये; परन्तु यह खंड (2) उनको सीमाओं में परिवर्तन करने देगा। मेरे विचार से यह प्रावधान ठीक नहीं है, पर फिर भी मैं यह मान सकता हूं कि प्रथम दस या बीस वर्ष तक इसको रखा जा सकता है। मेरे माननीय मित्र डा. पट्टाभि सीतारम्मैया तथा अन्य मित्रों ने इस प्रकार के संशोधन की सूचना दी है, परन्तु वे उसे पेश नहीं कर रहे हैं। मैं अपने संशोधन को पेश नहीं करना चाहता हूं, परन्तु मेरा ऐसा विचार जरूर है कि सीमाओं में परिवर्तन करना इतना सरल नहीं होना चाहिये कि वह केवल बहुमत के आधार पर किया जा सके। यदि हम इस खंड को अभी रखना चाहते ही हैं तो हमें कम से कम कुछ कालावधि निश्चित कर देनी

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

चाहिये। इसको विधान का स्थायी भाग नहीं बनाना चाहिए। मैं आशा करता हूं कि इस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विषय पर डा. अम्बेडकर अपने विचार स्पष्ट बतायेंगे।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** उपाध्यक्ष: महोदय, मेरे विचार से यह ऐसा विषय नहीं है जिस पर मेरे किसी वक्तव्य की आवश्यकता हो, परन्तु, क्योंकि श्री कामत ने ऐसी इच्छा प्रकट की है कि मैं संशोधन को केवल अमान्य स्वीकार ही न करूं, वरन् यह स्पष्ट करूं कि मैं अपने माननीय मित्र मि. नजीरुद्दीन द्वारा पेश किये गये संशोधन को स्वीकार करने के लिए क्यों कर तैयार नहीं हूं। अत: मैं उसे स्पष्ट करने के लिये उपस्थित हुआ हूं। मेरे विचार से यह माना जाएगा कि इस प्रकार के विषयों में, जिनका केवल वाक्य विन्यास से ही सम्बन्ध है और स्वयं अनुच्छेद के सार से नहीं, यह नहीं कहा जा सकता कि वह किसी प्रकार से भी सिद्धान्त सम्बन्धी विषय है। यह केवल प्रमाण सम्बन्धी विषय है कि विभिन्न विधानों में समान विषयों पर कैसी भाषा का प्रयोग किया गया है। ''of the Constitution'' पद के दुहराने सम्बन्धी प्रश्न पर जिस भाषा का हमने प्रयोग किया है, उसके सम्बन्ध में मेरा निवेदन है कि हमारे पास पूरा प्रमाण है। मेरे मित्र श्री कामत ने कहा है कि उन्होंने अनेकों विधानों को देखा, जैसे कि आस्ट्रेलिया और अनेक देशों के विधान; परन्तु उनको यह पद ''of this Constitution'' उनमें नहीं मिला। मुझे खेद है कि उन्होंने आयरलैंड के विधान तक अपना अनुसंधान नहीं बढ़ाया। यदि वे ऐसा करते तो उनको यह विदित होता कि इस विधान में वही वाक्य विन्यास है, जो कि आयरलैंड के विधान में है। हवाले के लिये आयरलैंड के विधान में अनुच्छेद 16, अनुच्छेद 27 उपवाक्य खंड (4), अनुच्छेद 32 और अनुच्छेद 46 उपवाक्य खंड (5) की ओर मैं उनका ध्यान आकर्षित करूंगा, जिनमें उनको जहां कहीं ''article'' शब्द मिलेगा उसके पश्चात् ''of this Constitution'' पद भी मिलेगा।

मैं श्री कामत को यह भी बता दूं कि इस सम्बन्ध में हमने भारतीय सरकार के सन् 1935 ई. के अधिनियम के वाक्य विन्यास का भी अनुसरण किया है। मुझे खेद है कि मुझे भारतीय सरकार के अधिनियम की समस्त धाराओं के परीक्षण करने का समय नहीं मिला, परन्तु अपने सौभाग्य से मुझे अभी एक धारा मिली

जो कि 124 (अ) है, जिसमें कि इसी प्रकार की शब्दावली का प्रयोग किया गया है। अतः जहां तक कि मि. नजीरुद्दीन के संशोधन के प्रथम भाग का सम्बन्ध है, मेरा निवेदन यह है कि हमने किसी सनक में काम नहीं किया है, बल्कि हमने जिस वाक्य विन्यास का भी प्रयोग किया है, वह अन्य देशों के विधानों में भी है।

उनके दूसरे संशोधन के सम्बन्ध में कि हमें ''or'' शब्द के पश्चात् ''article'' शब्द का फिर से प्रयोग नहीं करना चाहिये, तथा हमें केवल ''article 2 or 3'' ही कहना चाहिये, मेरा फिर वही निवेदन है। इस सम्बन्ध में भी हमने प्रसिद्ध विधानों का अनुसरण किया है और यदि मेरे मित्र उन विधानों की जांच करेंगे, तो उनको यह विदित होगा कि ऐसी पदावली अन्य स्थानों में भी है। सूचनार्थ मैं उनसे निवेदन करता हूं कि वे भारतीय सरकार के एक्ट की धारा 69 उपवाक्य-खंड (3) को देखें। वहां ''paragraph'' शब्द को प्रयोग हुआ है। उसमें ''paragraph (d) of paragraph (e)'' दिया हुआ है न कि केवल ''paragraph (d) or (e)'' इसलिये जहां तक सिद्धान्त का विषय है, यह विवादास्पद विषय अथवा मतभेद का विषय नहीं हो सकता है। यह केवल प्रमाण सम्बन्धी प्रश्न है और यह प्रश्न पूछा जा सकता है कि हमने कोई ऐसा काम नहीं किया, जो प्रमाण रहित हो? और मेरा विनम्र उत्तर यह है कि वाक्य विन्यास के प्रयोग करने में हमने जो कुछ भी किया है, उसके लिये प्रमाण है और इस कारण मसौदे में जिस प्रकार वाक्य खंड है, उन पर कोई आपत्ति नहीं हो सकती।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** तो फिर अनुच्छेद 4 के वाक्य खंड (2) के सम्बन्ध में क्या हो? मेरे विचार से वाक्य-खंड (2) में ''of this Constitution'' शब्दों के प्रयोग करने के लिये अल्पकालीन सूचना का संशोधन होना चाहिये जिससे कि मसौदा में अर्थ-स्पष्टीकरण हो।

***उपाध्यक्षः** अल्पकालीन सूचना के संशोधन को स्वीकार करके हम सभा में एक बुरा उदाहरण उपस्थित करने देना नहीं चाहते।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** श्रीमान्, मैं उसे स्वीकार नहीं कर सकता हूं।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है कि:

अनुच्छेद 4 के खंड (1) में से ''of this Constitution'' शब्द हटा दिये जायें और समस्त विधान के मसौदे में से जहां-जहां ये शब्द इसी प्रसंग में मिलते हों, वहां से हटा दिये जायें और अनुच्छेद 303 के खंड (1) में एक नई व्याख्या (ब ब) रखी जाये।''

''(ब ब) 'अनुच्छेद का अर्थ इस विधान के अनुच्छेद से है।''

प्रस्ताव अस्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है कि:

''अनुच्छेद 4 के खंड (1) में 'article 2 or article 3' शब्दों के स्थान में 'artilcle 2 or 3' शब्द और अंक रखे जायें।''

प्रस्ताव अस्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है कि:

''अनुच्छेद 4 के खंड (1) में 'article 2 or article 3' शब्दों के स्थान में 'artilce 2 ' शब्द और अंक रखे जायें।''

प्रस्ताव अस्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है कि:

''अनुच्छेद 4 के खंड (1) में 'shall contain such provisions for' शब्दों के स्थान में 'shall also provide for' शब्द रखे जायें।''

प्रस्ताव अस्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है कि:

''अनुच्छेद 4 के खंड (2) में 'for the purpose' शब्दों के स्थान में 'within the meaning of' शब्द रखे जायें।''

प्रस्ताव अस्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है कि:

''अनुच्छेद 4 के खंड (2) में 'for the purpose of article 304' शब्दों के स्थान में 'under article 304' शब्द रखे जायें।''

प्रस्ताव अस्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है कि:

''अनुच्छेद 4 के खंड (1) विधान का भाग माना जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है कि:

''अनुच्छेद 4 के खंड (2) विधान का भाग माना जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** अनुच्छेद 4 समाप्त हुआ। इसके पश्चात् कुछ संशोधन, संख्या 185 तथा अन्य अनुवर्ती संशोधन राष्ट्रीय झंडे, राष्ट्रीय भाषा, लिपि तथा अन्य ऐसे ही विषय सम्बन्धी है। मेरी समझ से किसी प्रकार के समझौते करने का प्रयत्न हो रहा है और मेरे विचार से यदि हम अभी इन पर विचार करना स्थगित कर दें और भाग 4 को ले लें, तो इससे सभा का हित भी होगा तथा समय भी बचेगा।

***सेठ गोविन्ददास** (मध्यप्रान्त तथा बरार : जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, भाग 4 पर विचार आरम्भ करने के पूर्व मैं आपको यह सूचित करना चाहता हूं कि ये नये खंड राष्ट्रीय झंडे, राष्ट्रीय भाषा, लिपि तथा देश के नाम तथा अन्य ऐसे ही विषय सम्बन्धी हैं। मुझे इसमें आपत्ति नहीं कि इन पर भविष्य में विचार हो, परन्तु इसके साथ-साथ मैं एक विषय पर आपकी व्यवस्था चाहता हूं और वह यह है कि भविष्य में जब कभी भी इन विषयों को लिया जाये, मान लीजिये कि जब पार्लियामेंट की भाषा का प्रश्न अनुच्छेद 99 में उपस्थित होता है, तब हमें राष्ट्रीय भाषा, राष्ट्रीय लिपि तथा अन्य उन विषयों के प्रश्नों को रखने दिया जाएगा, जो कि इन अनेकों संशोधनों में निहित हैं, जो इस समय पेश नहीं किये जा रहे हैं। उस समय यह नहीं कह दिया जाये कि क्योंकि अनुच्छेद 99 केवल पार्लियामेंट की भाषा तथा अन्य समान विषयों के सम्बन्ध का है, इन संशोधनों

[सेठ गोविन्ददास]

को पेश नहीं किया जा सकता। इसलिये श्रीमान्, मैं इसे व्यवस्था के रूप में दर्ज करा देना चाहता हूं जिससे कि भविष्य में इन प्रश्नों को उपस्थित किया जा सके और यदि सभा द्वारा कुछ निर्णय कर दिया जाता है, तो उन अनुच्छेदों को विधान में जहां भी उचित समझा जाये, रख दिया जाये। (*बाधाएं*)

***माननीय श्री के. सन्तानम्** (मद्रास : जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, कार्यपद्धति के विषय में मैं यह निवेदन करता हूं कि यह अध्यक्ष के अधिकार में है कि वह इस बात का नियमन करे कि कौन-कौन सी धारायें ली जायेंगी और किस-किस क्रम से। इस कारण मेरे विचार से आपके इस आदेश पर कि भाग 4 को पहले ले लिया जाये, कोई वाद-विवाद नहीं होना चाहिये। किसी माननीय सदस्य को यह अधिकार नहीं है कि वह पसन्द करके यह कहें कि इस अनुच्छेद को वहां और उस समय रखा जाये। आपने यह कहा कि अब भाग 4 को ले लिया जाये, अत: मैं निवेदन करता हूं कि अन्य किसी बीच में उपस्थित की गई बात पर विचार न करते हुए हमें उसी भाग के अनुच्छेद को ले लेना चाहिए।

***उपाध्यक्ष:** मैं इस पद के लिये अयोग्य हूं, पर मेरे विचार से यहां किसी व्यक्ति को इस बात में कोई शंका नहीं होनी चाहिये कि ये संशोधन बाद में अनियमित करार दे दिये जाये।। जहां तक मैं समझता हूं, हम यहां सर्वमान्य एक निश्चय करने के लिये और उस विधान को पास करने के लिये हैं, जो हम सबके लिये लाभदायक हो। मेरे विचार से यहां प्रत्येक सभा-सदस्य को शेष सभासदों के समक्ष अपने विचार प्रकट करने का पूर्ण अवसर दिया जाएगा और मैं सेठ गोविन्ददास को यह आश्वासन देता हूं कि यदि मैं यहां होऊंगा तो मैं यह देखूंगा कि किसी के साथ भी अन्याय न हो।

***श्री दामोदरस्वरूप सेठ** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): मैं संशोधन संख्या 187 पेश करना चाहता हूं, जिसका इस भाषा सम्बन्धी प्रचलित वाद-विवाद से कोई सम्बन्ध नहीं है। मेरा संशोधन इस प्रकार है। (*माननीय सदस्य अपना संशोधन पढ़ने लगे*)

***उपाध्यक्ष:** मैं यह व्यवस्था देता हूं कि यहां आपका संशोधन अनुचित है। हम भाग 4 पर आते हैं।

***श्री आर.के. सिधवा:** इसके पूर्व कि आप भाग 4 को लें, मुझे अपनी व्यक्तिगत बात रखनी है। जब मैंने यह कहा कि किसी महत्त्वपूर्ण विधान-मण्डल

में संशोधन पेश करने वाले को उत्तर देने का अधिकार प्रदान करने वाला कोई नियम नहीं है, तो माननीय श्री पुरूषोत्तम दास टन्डन ने मुझ पर दोषारोपण किया। मेरे पास प्रान्तीय व्यवस्थापिका बम्बई के नियम हैं, जो इस प्रकार हैं कि:

''प्रस्ताव पेश करने वाला न कि संशोधन पेश करने वाला''... (*बाधाएं*)

***उपाध्यक्ष:** इस समय इस विषय से हमारा कोई सम्बन्ध नहीं है और मैं बाध्य हूं कि माननीय सदस्य से अपना स्थान ग्रहण करने के लिए कहूं।

(*श्री सिधवा ने अपना स्थान ग्रहण किया।*)

***उपाध्यक्ष:** अब हम भाग 4 पर आते हैं। मैं यह व्यवस्था देता हूं कि संशोधन संख्या 831 और 832 नियम विरुद्ध है। संशोधन संख्या 833 के प्रथम भाग को मैं नियम विरुद्ध घोषित करता हूं। मि. महबूबअली बेग, यदि आप चाहें तो दूसरा भाग पेश कर सकते हैं।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** श्रीमान, मेरे विचार से यह संशोधन अपने उपयुक्त स्थल पर नहीं है। इस संशोधन में दिया हुआ है ''या विकल्पत:।'' निम्न परादिक अनुच्छेद 35 के साथ जोड़ दिया जाये, इत्यादि-इत्यादि। यह संशोधन संख्या 835 के पश्चात् आना चाहिए।

***उपाध्यक्ष:** आप अपनी आपत्ति बाद में रख सकते हैं।

***श्री महबूब अली बेग साहिब:** श्रीमान मैं उसे संशोधन सं. 835 के पश्चात् पेश करूंगा। क्या श्रीमान्, मुझे सामान्य रूप में भाग 4 पर बोलने की आज्ञा है?

***उपाध्यक्ष:** नहीं, आप केवल इसी संशोधन के संबंध में बोल सकते हैं।

***श्री लोकनाथ मिश्र:** उपाध्यक्ष महोदय, हम भाग 4 पर वाद-विवाद करने के लिए तैयार नहीं है? भाग 1 से भाग 4 पर यह तो लम्बी कुदान है। हम केवल भाग 2 और भाग 3 पर विचार विमर्श करने के लिये तैयार होकर आये थे। मेरे विचार से हमें समय मिलना चाहिये और वाद-विवाद स्थगित कर देना चाहिए।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** श्रीमान् भाग 4 निदेशक सिद्धान्त हैं। इस भाग पर बहुत से संशोधन नहीं हैं। भाग 2 नागरिकता के सम्बन्ध का है और भाग 3 मौलिक अधिकार के सम्बन्ध में है, जो न्याय विषय है। इन दोनों भागों पर अनेकों संशोधन आ चुके हैं। यह तय करने में कि किन संशोधनों को पेश करना है और किन को नहीं कुछ समय लगता ही है। जहां तक भाग 4 का सम्बन्ध है, उसके लिये बहुत समय की आवश्यकता नहीं है। वे केवल निदेशक सिद्धान्त हैं। उन पर विचार हो ही चुका है और जब इन सिद्धान्तों पर वाद-विवाद किया गया था। हमें बहुत समय लगा था। इन परिस्थितियों में मेरे विचार से किसी को भाग 4 के सम्बन्ध में सूचना के अभाव की शिकायत नहीं करनी चाहिये।

***उपाध्यक्षः** क्या आपको संशोधन की सूची मिल गई है?

***माननीय सदस्यः** जी हां।

***श्री अमियकुमार घोष** (बिहार : जनरल): श्रीमान, सामान्य प्रणाली यह है कि वाद-विवाद क्रमानुसार चलता है परन्तु हम अब भाग 1 से भाग 4 पर कूद रहे हैं। भाग 2 और 3 पर हमारे पास अनेकों संशोधन हैं। हम उनको पेश करने के लिये तैयार हैं, परन्तु भाग 4 के संशोधनों पर हमारी तैयारी नहीं है। अचानक हमारे सामने यह विषय आ गया और यही हमारी कठिनाई है। भाग 4 पर हमारे पास बहुत से संशोधन हैं।

***उपाध्यक्षः** आप यह मानेंगे कि हमें सभा की कार्यवाही शीघ्र समाप्त करनी है?

***श्री अमियकुमार घोषः** परन्तु, श्रीमान उसकी भाषावधि है।

***उपाध्यक्षः** आप यह बात भी मानेगें कि यह सभा के हितार्थ है कि यहां आने से पूर्व संशोधन भेजने वालों को मसौदा समिति के सदस्यों से वाद-विवाद करने का और कुछ समझौता करने का अवसर मिलता है। यह सभा के महान हित के लिये है और इस विचार से कि सभा का समय बचे। इन बातों से प्रेरित होकर मैंने भाग 2 और 3 पर विचार करने के लिये समय दिया है। मुझे विश्वास है कि मुझे सभा का पूर्ण समर्थन प्राप्त है।

***श्री अमियकुमार घोषः** श्रीमान, क्या आपसे निवेदन करूं कि आप इस समय सभा विसर्जन करें और अवकाश के पश्चात् फिर बैठें। बारह बज चुके हैं, हम तीन बजे फिर बैठ सकते हैं।

***उपाध्यक्षः** मैं इस पर विचार करूंगा।

***काज़ी सैयद करीमुद्दीन** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): श्रीमान, सदस्यों को कल यह सूचना दे देनी चाहिए थी कि हम भाग 4 पर वाद-विवाद करेंगे। भाग 4 पर पेश करने के लिये हम संशोधनों तक को नहीं लाये हैं। अनायास ही यह विषय हमारे सामने प्रस्तुत हुआ है। हम लोगों के लिये, जिन्हें संशोधन पेश करना है। बड़ी कठिनाई है, क्योंकि संशोधनों पर हमारी तैयारी नहीं है। श्रीमान जो तैयार नहीं है उनके लिये तो यह अन्याय होगा।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** श्रीमान, आश्चर्य है कि मि. करीममुद्दीन इस प्रकार की शिकायत कर रहे हैं। प्रत्येक सदस्य की अपने संशोधन पर तैयारी है।

***बी. पोकर साहब बहादुर** (मद्रास : मुस्लिम): श्रीमान श्री अनन्तशयनम् आयंगर का यह कहना बहुत अनुचित है कि इस विधान के 300 या 400 अनुच्छेदों में से किसी भी अनुच्छेद पर प्रत्येक सदस्य को अपने संशोधन पर तैयारी रखनी चाहिए। श्रीमान किसी भी व्यक्ति के लिये ऐसा करना असम्भव है। मैं निवेदन करता हूं कि इन महत्त्वपूर्ण भागों को छोड़कर आगे के भाग को लेना बहुत ही अनुचित है, क्योंकि हम में से अनेकों को यह आशा नहीं थी कि यह भाग लिया जाएगा। हमारे लिये क्रम से चलना ही उचित है, या जब तक सुविधा न हो सके, तब तक के लिये सभा स्थगित कर देनी चाहिए। (*बाधाएं*)

***श्री लोकनाथ मिश्रः** श्रीमान, छुपी तौर पर जो बातें की जा रही हैं, उन से हम न केवल किंकर्त्तव्यविमूढ़ ही हो गए हैं, वरन् और सब लोगों के साथ तेज चलने में भी असमर्थ हैं। यह हमारे लिये अशोभनीय है। घुटने टेककर मैं आपसे निवेदन करता हूं कि आप ऐसी परिस्थिति से हमें बचाइये और हमें नियमपूर्वक तथा उचित रीति से अपना कार्य संपादन करने में सहायता करिये। यदि ऐसी ही बातें होने को हों और पीठ पीछे ही कार्य-संपादन होना हो, तो कृपा करके हमें निकाल दीजिये और फिर जिस प्रकार वह चाहते हैं, उसी प्रकार कार्य होता रहेगा। परन्तु मैं आपसे निवेदन करूंगा कि इन संशोधनों पर विचार करने

[श्री लोकनाथ मिश्र]

और तैयार करने के लिये हमें समय दीजिये। हमारी स्थिति ऐसी होनी चाहिए कि हम अपने निर्वाचकों, महान उद्देश्य, अपने व्यक्तित्व तथा इस महान सभा के साथ न्याय कर सकें।

***श्री महावीर त्यागी** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): क्या मैं बहुसंख्यक दल के उद्‌बोधक तथा दल के नेताओं से निवेदन कर सकता हूं कि वे दूरदर्शिता तथा उदार विचारों से काम लें? मैं समझता हूं कि कदाचित् यह दुर्भाग्य की बात है और अन्याय तो है ही कि वादहेतुओं पर कांग्रेस के निर्णय करने की असमर्थता के कारण वे इस प्रकार की परिस्थितियों को अंगीकार करने के लिये समस्त सभा को विवश करें। मेरे विचार से या तो सभा विसर्जित कर देनी चाहिये या कोई ऐसा कार्य लेना चाहिये जिस पर विचार-विमर्श करने के लिये सदस्य तैयार हों।

***उपाध्यक्ष:** यदि सदस्यों का बहुमत सभा की कार्यवाही में भाग लेने में असमर्थ है, तो मैं अभी सभा-विसर्जन करने के लिये पूर्णतया तैयार हूं। हम कल दस बजे एकत्रित होंगे।

***माननीय सदस्यगण:** जी हां।

***उपाध्यक्ष:** सभा कल प्रात:काल दस बजे तक के लिये स्थगित की जाती है।

***बी. पोकर साहब बहादुर:** श्रीमान, क्या मैं जान सकता हूं कि किस भाग पर विचार किया जाएगा।

***उपाध्यक्ष:** कल सर्वप्रथम हम भाग 4 पर विचार करेंगे। यदि समय रहा तो हम आगे बढ़ेंगे।

इसके पश्चात् शुक्रवार ता. 19 नवम्बर, सन् 1948 ई. के
प्रात: दस बजे तक के लिये सभा स्थगित हुई।